ગુજરાત રાજ્યના શિક્ષણવિભાગના પત્ર-ક્રમાંક
મશબ/1215/170-179/છ, તા. 23-3-2016 – થી મંજૂર

हिन्दी

(प्रथम भाषा)

कक्षा 11

प्रतिज्ञापत्र

भारत मेरा देश है ।
सभी भारतवासी मेरे भाई-बहन हैं।
मुझे अपने देश से प्यार है और इसकी समृद्धि तथा बहुविध परंपरा पर गर्व है।
मैं हमेशा इसके योग्य बनने का प्रयत्न करता रहूँगा।
मैं अपने माता-पिता, अध्यापकों और सभी बड़ों की इज्जत करूँगा- एवं हरएक से नम्रतापूर्वक व्यवहार करूँगा।
मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि देश और देशवासियों के प्रति एकनिष्ठ रहूँगा।
उनकी भलाई और समृद्धि में ही मेरा सुख निहित है।

मूल्य: ₹ 36.00

गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल
'विद्यायन' , सेकटर 10-ए, गांधीनगर - 382010

गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, गांधीनगर

इस पाठ्यपुस्तक के सभी अधिकार गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल के अधीन है। इस पाठ्यपुस्तक का कोई भी अंश किसी भी रूप में गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल के नियामक की लिखित अनुमति के बिना प्रकाशित नहीं किया जा सकता।

विषय परामर्शन
डॉ. महावीरसिंह चौहान

लेखन-संपादन
डॉ. दयाशंकर त्रिपाठी(कन्वीनर)
डॉ. आलोक गुप्ता
डॉ. ओमप्रकाश गुप्ता
श्री राजेशसिंह क्षत्रिय
डॉ. कोकिलाबहन पारेख
डॉ. कन्हैयालाल डामोर
श्री उर्मिलाबहन दुबे

समीक्षा
डॉ. ईश्वरसिंह चौहान
श्री जे. एस. नैथाणी
श्री मुकेशकुमार तिवारी

संयोजन
डॉ. कमलेश एन. परमार
(विषय-संयोजक : हिन्दी)

निर्माण-संयोजन
श्री हरेश एस. लीम्बाचीया
(नायब नियामक : शैक्षणिक)

मुद्रण-आयोजन
श्री हरेश एस. लीम्बाचीया
(नायब नियामक : उत्पादन)

प्रस्तावना

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा तैयार किए गए नये राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के अनुसंधान में गुजरात माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षण बोर्ड द्वारा नया पाठ्यक्रम तैयार किया गया है, जिसे गुजरात सरकार ने स्वीकृति दी है।

नये राष्ट्रीय अभ्यासक्रम के परिपेक्ष में तैयार किए गए विभिन्न विषयों के नये अभ्यासक्रम के अनुसार तैयार की गई **कक्षा 11 हिन्दी (प्रथम भाषा)** की यह पाठ्यपुस्तक विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मंडल हर्ष का अनुभव कर रहा है। नये पाठ्यपुस्तक की हस्तप्रत निर्माण की प्रकिया में संपादकीय पेनल ने विशेष ख्याल रख कर तैयार की है। एन.सी.ई.आर.टी. एवं अन्य राज्यो के अभ्यासक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को देखते हुए गुजरात के नये पाठ्यपुस्तक को गुणवत्तालक्षी कैसे बनाया जाय उस पर संपादकीय पेनल ने सराहनीय प्रयत्न किया है।

इस पाठ्यपुस्तक को प्रसिद्ध करने से पहले इसी विषय के विषय निष्णांतों एवं इस स्तर पर अध्यापनरत अध्यापको की ओर से सर्वांगीण समीक्षा की गई है। समीक्षा शिबिर में मिले सुझावों को इस पाठ्यपुस्तक में शामिल किया गया है। पाठ्यपुस्तक की मंजूरी क्रमांक प्राप्त करने की प्रकिया के दौरान गुजरात माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षण बोर्ड के द्वारा प्राप्त हुए सुझावों के अनुसार इस पाठ्यपुस्तक में आवश्यक सुधार करके प्रसिद्ध किया गया है।

नये अभ्यासक्रम का एक उदेश्य है, इस स्तर के छात्र व्यवहारिक भाषा का उपयोग करने के साथ-साथ अपनी भाषा अभिव्यक्ति को विशेष असरकारक बनाएँ। साहित्यिक स्वरूप एवं सर्जनात्मक भाषा का परिचय के साथ-साथ हिन्दी भाषा की खूबियों को समझकर अपने स्व-लेखन में प्रयोग करना सीखें, इस लिए भाषा-अभिव्यक्ति एवं लेखन के लिए छात्रों को पूर्ण अवकाश दिया गया है।

इस पाठ्यपुस्तक को रुचिकर, उपयोगी एवं क्षतिरहित बनाने का पूरा प्रयास मंडल द्वारा किया गया है, फिर भी पुस्तक की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शिक्षा में रुचि रखनेवालों से प्राप्त सुझावों का मंडल स्वागत करता है।

एच. एन. चावडा	**डॉ. नीतिन पेथाणी**
नियामक	कार्यवाहक प्रमुख
दिनांक : 03-03-2016	**गांधीनगर**

प्रथम संस्करण : 2016

प्रकाशक : गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल, विद्यायन , सेक्टर-10ए, गांधीनगर की ओर से एच. एन. चावडा, नियामक

मुद्रक :

मूलभूत कर्तव्य

भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह – *

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे ;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करनेवाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे ;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे ;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो ;ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं ;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्त्व संझे और उसका परिरक्षण करे ;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दया भाव रखे ;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे ;

(झ) सार्वजनिक सम्पति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे ;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के क्षेत्रों में उत्कर्ष की और बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरन्तर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू ले ;

(ट) यदि माता-पिता या संरक्षक है, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, बालक या प्रतिपाल्य के लिए यथास्थिति शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

* भारत का संविधान : अनुच्छेद 51-क

अनुक्रमणिका

1. मातृवेदना	(कविता)	सूरदास	1
2. अपराध	(कहानी)	उदयप्रकाश	3
3. सवैया और कवित्त	(कविता)	देव	6
4. रुचि	(निबंध)	बालकृष्ण भट्ट	8
5. ज्ञानोपदेश	(कविता)	ब्रह्मानंद स्वामी	11
6. अभय साधक-बाबा आमटे	(जीवनी)	न्यायाधीश चंद्रशेखर धर्माधिकारी	13
7. भारतमाता	(कविता)	सुमित्रानंदन पंत	16
8. मजबूरी	(कहानी)	मन्नू भंडारी	18
9. बिस्तरा है न चारपाई है	(गज़ल)	त्रिलोचन शास्त्री	25
10. अदम्य जीवन	(रिपोर्ताज़)	रांगेय राघव	27
11. याचना	(कविता)	कन्हैयालाल नंदन	33
12. परमात्मा का कुत्ता	(कहानी)	मोहन राकेश	35
13. नदी, न पुल	(कविता)	फूलचंद गुप्ता	40
14. धूप-बत्ती : बुझी, जली!	(निबंध)	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	42
हिन्दी के विविध रूप			46
	द्वितीय सत्र		
15. मानसरोदक खंड	(कविता)	मलिक मुहम्मद जायसी	56
16. महाराजपुर से ग्वारीघाट	(यात्रा-वृतांत)	अमृतलाल बेगड़	58
17. दातव्य कौ अंग	(कविता)	वाजिद जी	63
18. स्कंदगुप्त	(नाट्यांश)	जयशंकर प्रसाद	64
19. बादल-राग	(कविता)	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'	69
20. राजेन्द्र बाबू	(संस्मरण)	महादेवी वर्मा	71
21. लहरों का निमंत्रण	(कविता)	हरिवंशराय 'बच्चन'	75
22. बड़ी दादी की बड़ी बात	(उपन्यास-अंश)	कमलेश्वर	77
23. रामदास	(कविता)	रघुवीर सहाय	83
24. गंगा : देश की प्राण नाड़ी	(निबंध)	विद्यानिवास मिश्र	85
25. गुठली आम की	(कविता)	रंजना जायसवाल	88
26. ओ लाल आफताब!	(गद्य-गीत)	फणीश्वरनाथ रेणु	90
27. मकई के खेत में	(कविता)	निलय उपाध्याय	93
28. खितीन बाबू	(कहानी)	अज्ञेय	95
साहित्य शास्त्र			99
	(पूरक वाचन)		
1. जुदाई गुजरात की	(कविता)	वली	115
2. गाँधीजी को एक चिट्ठी	(पत्र)	जयप्रकाश नारायण	117
3. पुस्तकें	(कविता)	विश्वनाथप्रसाद तिवारी	119
4. रसायन और हमारा पर्यावरण	(विज्ञान-लेख)	डॉ. एन. एल. रामनाथन	121

•

1 मातृवेदना

सूरदास

(जन्म : सन् 1478 ई ; निधन : सन् 1573 ई.)

कृष्ण भक्त कवि सूरदास का जन्म दिल्ली के निकट सीही नामक गाँव में हुआ था। वे दिल्ली-मथुरा मार्ग पर यमुना-किनारे गऊघाट पर रहते थे और कृष्णभक्ति के पद रचकर गाया करते थे। पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक वल्लभाचार्यजी से उनकी भेंट यहीं पर हुई थी। वल्लभाचार्यजी की प्रेरणा से ही सूर ने दैन्य भाव त्याग कर कृष्ण की बाललीलाओं का गान आरंभ किया था। 'श्रीमद् भागवत' से भी सूर पर्याप्त प्रभावित हुए । उनकी भक्ति में सख्य भाव की प्रधानता देखने को मिलती है।

सूर के पदों में वात्सल्य और श्रृंगार का बेजोड़ वर्णन हुआ है। उनके बाललीला संबंधी पदों में बाल मनोभावों का बड़ा सहज चित्रण हुआ है।'सूरसागर' उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। 'भ्रमरगीत' उनका सर्वोत्तम उपालंभ काव्य है जिसमें गोपियों की वेदना का बहुत भावपूर्ण चित्रण हुआ है। 'साहित्य लहरी' सूर के दृष्टकूट पदों का संग्रह है। सूर की कविता में ब्रज भाषा का माधुर्य नाद-सौंदर्य के साथ फूट पड़ा है।

प्रस्तुत पदों में पुत्र-वियोग से व्यथित माता के हृदय का क्रंदन आँसू बन फूट पड़ा है। कंस की सूचना से सुफलक-सुत अर्थात् अक्रूर जब कृष्ण को मथुरा ले जाते हैं और नंद खाली हाथ वापस लौट आते हैं तब माता यशोदा उनके समक्ष अपनी असह्य वेदना तो व्यक्त करती ही हैं,नंद को उपालंभ भी देती हैं। कहती हैं कि अपने प्राण प्यारे के बिछुड़ने पर आपकी छाती फट क्यों नहीं गई ? राजा दशरथ की तरह पुत्र-वियोग में आपके प्राण क्यों नहीं निकल गए? माता यशोदा को अपना ही नहीं सारे ब्रज का जीवन अंधकारमय प्रतीत होता है। अपने को हतभागिनी समझती हुई माता के आँसू रुकने का नाम नहीं लेते। सूर ने इन पदों में वात्सल्य-वियोग का मार्मिक वर्णन किया है।

---

(1)

दोउ ढोटा गोकुलनायक मेरे।
काहैं नंद छाँड़ि तुम आए , प्रान जिवन सब केरे ॥
तिनकें जात बहुत दुख पायौ, रोर परी इहिं खेरे।
गोसुत गाइ फिरत हैं दहुँ दिसि, वै न चरै तृन घेरे॥
प्रीति न करी राम दशरथ की, प्रान तजे बिनु हेरैं।
'सूर' नंद सौं कहति जसोदा, प्रबल पाप सब मेरैं॥

(2)

नंद हरि तुमसौं कहा कह्यौ।
सुनि सुनि निठुर बचन मोहन के, कैसैं हृदय रह्यौं ॥
छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत, दौरि न चरन गह्यौ।
दरकि न गई बज्र की छाती, कत यह सूल सह्यौ॥
सुरति करत मोहन की बातैं, नैननि नीर बह्यौ।
सुधि न रही अति गलित गात भयौ, मनु डसि गयौ अह्यौ॥
उन्हें छाँड़ि गोकुल कत आए, चाखन दूध दह्यौ।
तजे न प्रान 'सूर' दसरथ लौ, हुतौ जन्म निबह्यौ॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

दोउ ढोटा दोनों बालक (कृष्ण-बलराम) **रोर** बहुत से लोगों की रोने की आवाज **खेरे** गाँव **दहुँ** दस **तृन** घास **प्रबल** भारी **निठुर** निष्ठुर, कठोर **सनेह** स्नेह, प्रेम **मंदिर** घर **कत** कैसे **दरकि** फट **सूल** वेदना **सुरति** याद करके **सुधि** ध्यान,याद **गलित** शिथिल, गला हुआ **गात** शरीर **अह्यौ** साँप **निबहौं** निबाहना, सार्थक

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) गोकुलनायक किसे कहा गया है ?

(2) ब्रज की गायों की क्या स्थिति है ?

(3) 'प्रीति न करी राम दसरथ की' से क्या तात्पर्य है ?

(4) सारे दु:ख का कारण यशोदा किसे मानती हैं ?

(5) 'दरकि न गई बज्र की छाती' का आशय स्पष्ट कीजिए।

(6) 'यशोदा को मानो साँप ने डस लिया हो' उनकी किस स्थिति को देखकर कहा गया है ?

(7) यशोदा की आँखों से आँसू क्यों बहने लगे ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'दोउ ढोटा गोकुलनायक मेरे' पद का भावार्थ लिखिए।

(2) माँ यशोदा की वेदना अपने शब्दों में विस्तार से लिखिए।

(3) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए:

सुरति करत मोहन की बातैं, नैननि नीर बह्यौ ।
सुधि न रही अति गलित गात भयौ, मनु डसि गयौ अह्यौ ॥

योग्यता-विस्तार

- यशोदा की मातृवेदना से संबंधित अन्य पद पुस्तकालय से ढूँढकर पढ़िए और लिखिए।
- सूर रचित अपने प्रिय पदों को लय व ताल के साथ गाएँ।

•

2	# अपराध

उदयप्रकाश
(जन्म :सन् 1952 ई.)

आठवें दशक के एक महत्तवपूर्ण कवि-कहानीकार उदयप्रकाश का जन्म मध्यप्रदेश के शहडोल जिले के सीतापुर गाँव में हुआ था। वे स्नातक तर विज्ञान के छात्र रहे किंतु बाद में नंददुलारे वाजपेयी स्वर्ण पदक के साथ हिन्दी साहित्य में एम.ए. कर अध्यापन और शोधकार्य किया। कुछ वर्ष 'पूर्वग्रह' और 'दिनमान' का संपादन भी किया।

उदयप्रकाश समकालीन हिन्दी कविता के एक ऐसे समर्थ कवि हैं जिन्होंने प्रगतिशील कविता की विरासत को लेकर अपनी कविता की एक नई पहचान बनाई। उनकी कविता और कहानी दोनों में जनसाधारण अर्थात् आम आदमी की आवाज की सहज अभिव्यक्ति हुई है। वे अपने आसपास के परिवेश को पूरी ईमानदारी से अपनी रचनाओं में आलेखित करते हैं। सुनो कारीगर, अबूतर, कबूतर, रात में हारमोनियम, एक भाषा भी होती है- इनके काव्य संग्रह हैं। दरियाई घोड़ा, तिरिछ, और अंत में प्रार्थना, पॉल गोमरा का स्कूटर तथा 'मोहनदास' कहानी संग्रह हैं। 'मोहमदास' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

आत्मकथन शैली में रचित इस कहानी में कथा-नायक है छोटाभाई। छोटेभाई की मानसिक पीड़ा और पश्चाताप का वर्णन कहानी का मुख्य उद्देश्य है। खेलते समय अपनी ही गलती से अपने सिर पर लगी चोट का मिथ्या दोषारोपण छोटाभाई अपने अपाहिज किंतु देवतुल्य बड़े भाई पर लगाकर उसे पिता से पिटवाता है। उस समय उसे इस बात के लिए तनिक भी मलाल नहीं होता किंतु बाद में अपने किए पर बहुत ग्लानि एवं पीड़ा होती है। यह घटना उसे आजीवन अपराध बोध से पीड़ित रखती है। माता-पिता अब नहीं हैं इसलिए अब वह उनसे क्षमा भी नहीं माँग सकता। अपराध का प्रायश्चित व्यक्ति को ऊँचा उठा देता है, यह बात संकेत के रूप में उभरकर आती है।

मेरे भाई मुझसे छह साल बड़े थे। आश्चर्य था कि पूरे गाँव में सभी लड़के मुझसे छह वर्ष बड़े थे। मैं इसलिए सबसे छोटा था और अकेला था। सब खेलते तो उनके पीछे मैं लग जाता।

मेरे भाई बचपन से अपाहिज थे। उनके एक पैर को पोलियो हो गया था। लेकिन वे बहुत सुन्दर थे। देवताओं की तरह। वे आसपास के कई गाँवों में सबसे अच्छे तैराक थे और उनको हाथ के पंजों की लड़ाई में कोई नहीं हरा सकता था। घूँसे से नारियल और ईंटे तोड़ देते थे।

जबकि मैं दुबला-पतला था। कमज़ोर और चिड़चिड़ा। मुझे अपने भाई से ईर्ष्या होती थी क्योंकि उनके बहुत सारे दोस्त थे।

मैं सबसे छोटा था इसीलिए मैं भाई के लिए एक उत्तरदायित्व की तरह था। वे मुझसे प्यार करते थे और मेरे प्रति उनका रुख एक संरक्षक की ज़िम्मेदारी जैसा था।

सब खेलते और मैं छोटा होने के कारण अकेला पड़ जाता तो भाई आकर मेरी मदद करते। जोड़ी और पालीवाले कई खेलों में मुझे अपनी पाली में शामिल कर लेते थे। कोई दूसरा लड़का अपनी पाली में मुझे शामिल करके हार का खतरा नहीं उठाना चाहता था। अकसर भाई मेरी वजह से ही हारते। फिर भी वे मुझसे कभी कुछ नहीं कहते थे। मैं उनकी ज़िम्मेदारी था और वह उसे निभाना चाहते थे। जहाँ तक मुझे याद है, उन्होंने कभी मुझे नहीं मारा।

जो कुछ मैं बताने जा रहा हूँ उसका सम्बन्ध भाई और मुझसे ही है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण घटना है। ऐसी घटना जो जीवन-भर आपका साथ नहीं छोड़ती और अक्सर स्मृति में, बीच-बीच में, कहीं अचानक सुलगने लगती है। किसी अँगारे की तरह।

हुआ उस दिन यह कि मैं भाई के साथ खेलने गया। उस दिन बारिश हो चुकी थी और शाम की ऐसी धूप फैली हुई थी जो शरीर में उल्लास भरा करती है। ऐसे में कोई भी खेल बहुत तेज़ गतिमय और सम्मोहक हो जाता है।

सभी लड़के खड़ब्बल खेल रहे थे। लकड़ी की छोटी-छोटी डण्डियाँ हर लड़के के पास थीं। पूरी ताकात से खड़ब्बल को ज़मीन पर, आगे की ओर गति देते हुए, सीधे मारा जा रहा था। ताकत और संवेग से नम धरती पर गिरा हुआ खड़ब्बल गुलाटियाँ खाते हुए बहुत दूर तक जाता था।

मुझमें न इतनी ताकत थी, न मैं इतना बड़ा था कि खड़ब्बल उतनी दूर तक पहुँचाता, जबकि वहाँ एक होड़, एक प्रति द्वन्द्विता शुरू हो चुकी थी। कोई भी हारना नहीं चाहता था। यह एक ऐसा खेल था जिसमें कोई पाली नहीं होती, कोई किसी का जोड़ीदार नहीं होता। हर कोई अपनी अकेली क्षमता से लड़ता है।

भाई भी उस खेल में डूब गए थे। वे कई बार पिछड़ रहे थे, इसलिए गुस्से और तनाव में और ज़्यादा ताकत से खड़ब्बल फेंक रहे थे।

वे मुझे भुला चुके थे। और मैं अकेला छूट गया था। छह वर्ष पीछे। कमज़ोर। उस दिन, उस खेल में शामिल होने के लिए मुझे छह वर्षों की दूरी पार करनी पड़ती, जो मैं नहीं कर सकता था।

भाई जीतने लगे थे। उनका चेहरा खुशी और उत्तेजना में दहक रहा था। उन्होंने एक बार भी मेरी ओर नहीं देखा। वे मुझे पूरी तरह भूल चुके थे।

मुझे पहली बार यह लगा कि मैं वहाँ, कहीं नहीं हूँ।

मुझे रोना आ रहा था और भाई के प्रति मेरे भीतर एक बहुत ज़बर्दस्त प्रतिकार पैदा हो रहा था। मैं अपने खड़ब्बल को, अकेला अलग खड़ा हुआ एक पत्थर पर पटक रहा था। मैं ईर्ष्या, आत्महीनता, उपेक्षा और नगण्यता की आँच में झुलस रहा था।

तभी अचानक मेरा खड़ब्बल चट्टान से टकराकर उछला और सीधे मेरे माथे पर आकर लगा। माथा फूट गया और खून बहने लगा। मैं चीखा तो भाई मेरी ओर दौड़े। खेल बीच में ही रुक गया था। "क्या हुआ ? क्या हुआ" भाई घबरा गए थे और मेरे माथे को अपनी हथेली से दबा रहे थे। मेरा गुस्सा मिटा नहीं था। मैं भाई को अपनी उपेक्षा का दण्ड देना चाहता था।

मैंने भाई को झटक दिया और खुद को छुड़ाकर घर की ओर भागा। भाई डर गए थे और दौड़कर मुझे मनाना चाहते थे। लेकिन उनका दायाँ पैर पोलियों का शिकार था इसलिए वे मेरे साथ दौड़ नहीं सकते थे। उन्होंने लँगड़ाकर दौड़ने की कोशिश भी की लेकिन वे गिर गए।

मेरी कमीज़ खून से भीग गई थी। सिर के बाल खून से लिथड़ गए थे। माँ मुझे देखकर डर गई और रोने लगीं। पिताजी घबराए हुए घाव पर पावडर डालने लगे।

मैंने रोते हुए माँ को बताया कि मुझे भाई ने खड़ब्बड़ से मारा है।

तभी मैंने देखा कि भाई लँगड़ाते हुए चले आ रहे थे। अकेले। उनको आशंका हो गई होगी। वे डरे हुए रहे होंगे।

भाई बार-बार कहते रहे कि मैंने इसे नहीं मारा, लेकिन पिताजी उन्हें पीटे जा रहे थे। भाई रो रहे थे। वे सच बोल रहे थे, लेकिन उन्हें सज़ा मिल रही थी।

मैंने भाई का चेहरा देखा। वे मेरी ओर देख रहे थे। उनकी आँखें लाल थीं और उनमें करुणा और कातरता थी, जैसे वे मुझसे याचना कर रहे हों कि मैं सच बोल दूँ। लेकिन तब तक देर हो चुकी थी। उन्हें सज़ा मिल चुकी ती। फिर इतनी जल्द बात को बिल्कुल बदलना मुझे सम्भव भी नहीं लग रहा था। क्या पता, पिताजी फिर मुझे ही मारने लगते। मैं डर गया था।

यह घटना वर्षों पुरानी है। लेकिन भाई की वे कातर आँखें अब भी मुझे कभी-कभी घूरने लगती हैं। याचना करती हुई, सच बोलने की भीख माँगती हुई। मेरी स्मृति में जब भी वे आँखें जाग उठती हैं, मेरी पूरी चेतना ग्लानि, बेचैनी और अपराध-बोध से भर उठती है।

मैं अपने इस अपराध के लिए क्षमा माँगना चाहता हूँ। इस अपराध की सज़ा पाना चाहता हूँ। लेकिन अब तो माँ और पिताजी भी नहीं हैं, जिनसे मैं यह बताऊँ कि उस दिन ठीक-ठीक क्या हुआ था।

भाई ही मुझे क्षमा कर सकते हैं, जिन्हें मेरे झूठ का दण्ड भोगना पड़ा। उनसे मैंने इस घटना का जिक्र भी करना चाहा, लेकिन उन्हें वह घटना याद ही नहीं। वे इसे बिल्कुल पूरी तरह भूल चुके हैं।

तो इस अपराध के लिए मुझे क्षमा कौन कर सकता है ? क्या यह ऐसा अपराध नहीं है जिसके बारे में लिया गया जो निर्णय था, वह गलत और अनन्यायपूर्ण था, लेकिन जिसे अब बदला नहीं जा सकता ?

और क्या यह ऐसा अपराध नहीं है, जिसे कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता ? क्योंकि इससे मुक्ति अब असम्भव हो चुकी है।

शब्दार्थ-टिप्पणी

अपाहिज अपंग, विकलांग **उत्तरदायित्व** जिम्मेवारी **पाली** गोल **संरक्षक** रक्षा करनेवाला **वजह** कारण **अंगारा** चिनगारी **खड़ब्बल** घर के बाहर छोटी-छोटी डंडियों से खेला जानेवाला लड़कों का खेल **नम** गीला **गुलाटियाँ** उलटना-पलटना **होड़** प्रतिस्पर्धा **प्रतिकार** बदले का भाव

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) गाँव के सभी लड़के कथा-वाचक से कितने वर्ष बड़े थे ?

(2) कथा-वाचक के बड़े भाई कब से अपाहिज थे ?

(3) कथा-वाचक के प्रति उसके बड़े भाई का रुख किस प्रकार का था ?

(4) 'खड़ब्बल' कहाँ-घर के बाहर या अंदर-का खेल है ?

(5) दोनों भाइयों में कौन सच और कौन झूठ बोल रहा था ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) बड़े भाई की क्या विशेषताएँ थी ?

(2) 'खड़ब्बल' खेल का वर्णन कीजिए।

(3) कथा-वाचक की चेतना ग्लानि, बेचैनी, अपराध-बोध से क्यों भर गयी ?

योग्यता- विस्तार

- प्रेमचेद की 'बड़े भाई साहब' कहानी पढ़िए और 'अपराध' कहानी से उसकी तुलना कीजिए ।
- बच्चों के खेल पर आधारित एक कहानी खोजकर पढ़िए।

•

3 सवैया और कवित्त

देव (देवदत्त)

(जन्म : सन् 1673 ई; निधन : सन् 1767 ई.)

महाकवि देव रीतिकाल के सर्वाधिक प्रतिभासंपन्न कवि माने जाते हैं। इनका जन्म इटावा जिले के कुसमरा गाँव में हुआ था। ये मूलत: एक सहृदय कवि हैं। यद्यपि काव्यशास्त्र की रचना भी इन्होंने की है। स्वमानी स्वभाव की वजह से ये किसी एक आश्रयदाता के यहाँ अधिक न टिक सके। इन्हें बिहारी के समान ही लोकप्रियता एवं सम्मान प्राप्त हुआ है। इनकी रचनाओं का मुख्य विषय श्रृंगार है। देव में जीवन के मार्मिक प्रसंगों की पहचान और उनका अभिव्यंजना–कौशल विशेष महत्त्वपूर्ण है।

इनकी रचनाओं की संख्या लगभग 52 बताई जाती है किंतु महत्त्वपूर्ण रचनाएँ इस प्रकार हैं- भावविलास, भवानीविलास, रसविलास, सुखसागर तरंग, प्रेमचंद्रिका तथा काव्य–रसायन । इनका प्रकृति–चित्रण बहुत सुंदर होता है। ब्रज भाषा का सौंदर्य इनकी कविता में सहज ही फूट पड़ा है। कवित्त और सवैया इनके प्रिय छंद रहे हैं।

पहला छंद 'सवैया' है जिसमें कृष्ण के रूप–सौंदर्य के प्रति ललचाकर मुग्ध हो जानेवाली गोपी की बरबसता–विवशता का माधुर्यमय वर्णन है।

दूसरा छंद 'कवित्त' है जिसमें ऋतुराज वसंत के बालरूप की अनन्य सुंदरता का मनोहर चित्रण है। प्रकृति के कोमल पालने में सोये हुए वसंत रूपी बालक को पवन झुला रहा है, केकी, कीर, कोयल, कंजकली आदि अपने–अपने अंदाज से उसे उल्लसित कर रहे हैं। पराग–रूपी राई–नोन से उसकी नजर उतारी जा रही है। प्रकृति के इस रोमांचक खेल का अलंकारिक वर्णन बहुत सुंदर एवं मार्मिक बन पड़ा है।

सवैया

धार में धाइ धँसी निरधार है, जाइ फँसी उकसीं न उघेरी।
री अँगराय गिरी 'गहरी गहि' फेरे फिरीं न घिरीं नहिं घेरीं।
देव कछु अपनो बस ना रस लालच लाल चितै भई चेरीं।
बेगि ही बूड़ि गईं पखियाँ अँखियाँ मधु की मखियाँ भईं मेरी।

कवित्त

डार द्रुम पालन, बिछौना नव पल्लव के,
सुमन झिंगूला सोहै, तन छबि भारी दै।
पवन झुलावै केकी–कीर बतरावै 'देव',
कोकिल हलावै–हुलसावै कर तारी दै।
पूरित पराग सों उतारो करै राई –नोन,
कंजकली नायिका, लतान सिर सारी दै।
मदन महीप जू को बालक बसंत, ताहि
प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै॥

शब्दार्थ–टिप्पणी

धाइ दौड़कर **निरधार** निराधार **उकसीं** ऊपर उठना,उभरना **उघेरी** खिंचना **अँगराय** अंगड़ाई लेकर **चितै** देखते ही **चेरीं** दासी **बेगि** वेग, तेजी से **बूड़ि गईं** डूब गईं **द्रुम** पेड़ **बिछौना** बिस्तर **सुमन झिंगूला** फूलों का झबला **केकी** मोर **कीर** तोता **हलावै–हुलसावै** हिलाना, बातों की मिठास **उतारो करै राई नोन** नजर लगने से शिशु को बचाने के लिए उसके ऊपर राई–नमक घुमाकर आग

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) गोपबाला कृष्ण के प्रेम-रस में किस तरह डूबती है ?

(2) गोपबाला अपनी आँखों की तुलना किससे करती है ?

(3) बाल वसंत को कौन झूला झुला रहा है ?

(4) बालक वसंत को किसकी नजर न लगे, उसके लिए क्या उपाय किया जा रहा है ?

(5) 'प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै' इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

2. उत्तर लिखिए :

(1) गोपबाला अपनी आँखों की विवशता का चित्रण सखी से किस प्रकार करती है ?

(2) बाल वसंत के रूपक को समझाइए ।

(3) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(A) धार में धाइ धँसी निरधार है, जाइ फँसी उकसीं न उघेरीं।
री अँगराय गिरी 'गहरी गहि' फेरे फिरीं न घिरीं नहिं घेरीं।

(B) पवन झुलावै केकी-कीर बतरावै 'देव,'
कोकिल हलावै-हुलसावै कर तारी दै।

योग्यता-विस्तार

- भारतीय ऋतुचक्र में वसंत के महत्त्व को जानिए।

•

4 रुचि

बालकृष्ण भट्ट

(जन्म: सन् 1844 ई; निधन:न् 1914 ई.)

पं. बालकृष्ण भट्ट का जन्म उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद में हुआ था। पिता बड़े व्यापारी थे लेकिन भट्टजी का मन पैतृक व्यापार में नहीं लगा, उन्होंने सारा जीवन साहित्य की सेवा में अर्पित कर दिया। निबंधकार और पत्रकार के रूप में भारतेन्दु युग के लेखकों में उनका स्थान बहुत ऊँचा रहा। आत्मपरकता और व्यक्ति व्यंजकता उनके निबंधों की प्रमुख पहचान है। कुछ लोग तो उन्हें हिन्दी का 'एडिसन' भी कहते हैं। 'हिन्दी प्रदीप' नामक मासिक पत्रिका का संपादन कार्य लगातार बत्तीस वर्षों तक उन्होंने किया था।

उनके निबंधों का संचयन 'भट्ट निबंधावली' के नाम से उपलबद्ध है। 'नूतन ब्रह्मचारी' तथा 'सौ अजान एक सुजान' उनके मुख्य उपन्यास हैं। 'दमयंती स्वयंबर', 'चंद्रसेन','शिशुपालवध', तथा 'रेल का विकट खेल' प्रमुख नाटक हैं। संस्कृत और बंगला भाषा से अनुवाद भी उन्होंने किए। 'हिन्दी शब्द सागर' के संपादन में भी उन्होंने अपना सहयोग दिया।

प्रस्तुत निबंध में वैयक्तिक रुचि को किसी भी काम की सफलता का मुख्य आधार बतलाया गया है। लेखक के अनुसार रुचि या श्रद्धा से किया जानेवाला काम ही 'विधिवत्' कर्म कहा जा सकता है। खान-पान, पढ़ाई-लिखाई, खेल-कूद, जप-तप आदि जीवन की जितनी ही प्रवृत्तियाँ हैं, उनको लेकर हर व्यक्ति की रुचि अलग-अलग होती है, कम या ज्यादा हो सकती है। अत: रुचि जितनी गहरी होगी, काम उतना ही उमदा होगा। सच ही कहा है कि जितना गुड़ डालोगे,उतना ही मीठा होगा। लेखक ने बड़े सहज ढंग से रुचि विषयक विविधताओं और विशेषताओं का निरूपण किया है।

कोई काम हो उमदी तरह पर कभी नहीं होगा जब तक उस काम में रुचि न हो। गीता में भगवान् कृषणचन्द्र ने कहा भी है--

बिना श्रद्धा अर्थात् रुचि के जप, तप, दान, हवन आदि जो किया जाता है, सब व्यर्थ है-- करना न करना दोनों एक-सा है; न परलोक में उसका कुछ फल मिलता है, न इसी लोक में इस काम की कोई तारीफ करता है। शास्त्रवालों ने विधिपूर्वक या विधिवत् पर बड़ा जोर दिया है। सच पूछो तो रुचि या श्रद्धा से किसी काम का करना ही विधि है क्योंकि विधि तभी हो सकती है जब मन में हमारे उस काम की ओर रुचि है। ध्यान जमाकर देखिए तो मनुष्य जन्मते ही रुचि में दखल देने लगता है मानो रुचि उसकी दासी या जरखरीद लौंडी हो; बच्चे को माँ को दूध के एवज गाय या बकरी का दूध शीशी या रुई के फाहे में दिया जाता है तो वह उसको ऐसी रुचि से नहीं पीता, जैसा माँ का दूध। ऐसे ही माँ की गोद के बदले उसे पालने या चारपाई पर सुला दो तो कदाचित् दस में दो-एक ऐसे होंगे जिसको बिना रोये-गाये खुशी से उस पर लेटे रहना रुचेगा। फिर ज्यों-ज्यों उमर में वह बढ़ता जाता है, अपने हर एक काम खाना, पीना, सोना, ओढ़ना पहिनना, खेल-कूद, पढ़ना-लिखना आदि में रुचि को जगह देता जाता है।

रुचि ही के जुदे-जुदे प्रकारान्तर या उसकी बारीकियाँ फैशन के नाम से चल पड़े हैं; इस नई सभ्यता के जमाने में जिसकी हद से जियादह छानबीन हो रही है। फ्रांस और इंगलैंड सरीखे मालदार सभ्य देशों में जिसकी यहाँ तक उन्नति है कि सुनते हैं, इंग्लैंड में अमीर घरानों की लेडियों के लिए दिन में तीन बार पेरिस से उनके पोशाक आदि वेश-भूषा का नमूना आया करता है। वैसे ही हम लोग भी अपने खाने-पीने में रुचि की बारीकियों को बेहद बढ़ाये हुए हैं। कोई कहते हैं, हम नहीं जानते लोगों को रोटी खाना कैसे पसन्द आता है, हमको तो दोनों जून ताजी-ताजी लुचुई और बेढ़नी मिलती जाय तो कभी कच्ची रसोई का नाम न लें। दूसरे कहते हैं, तुम्हारी भी क्या ही रुचि है ? लुचुई-सी सकील चीज तुम्हें कैसे रुचती है; अजी, कहीं बिना कच्ची रसोई खाये जी भरता है। हमारे हिन्दुस्तान में कच्ची रसोई का तरीका ऐसा बढ़िया रक्खा गया है कि अगर तकल्लुफ को मौका दिया जाय तो हकीकत में रसोई रसायन हो जाती है। एक तीसरे बोल उठे, यह तो अपनी-अपनी रुचि की बात है। पर मेरी राय

तो यह है कि खाना मुसलमान बहुत अच्छा पकाते हैं, खूसूसन गोश्त की किस्में। इस पर कोई कंठीबन्द वहाँ पर बैठे थे, बोल उठे--हरे-हरे तुम्हारी रुचि कैसी है, हम नहीं कह सकते। हमको तो मांस-भोजन का नाम सुन मिचलाई आने लगती है। आपने हमारे गोपाल मन्दिर की खुशबूदार बसोंधी, मोहनथाल और दूसरे-दूसरे छप्पन प्रकार के भोग का महाप्रसाद मालूम होता है कभी आँख से भी नहीं देखा, नहीं तो मुसलमानों के भोजन को कभी न सराहते?

ऐसे ही पेय वस्तु में भी रुचि आ टाँग अड़ाती है। पीना हम उसे कहेंगे जो बिना दाँतों की सहायता के केवल जीभ और तालू द्वारा हलक के भीतर जाता है; परन्तु रस के ज्ञान में रसना अर्थात् जीभ का अधिक सम्बन्ध है तो वहाँ रुचि की सलाह ली जाती है। पेय पदार्थों में सबसे पहले पानी है, जिसको वैद्यक वाले यों तो कहते हैं--शरत् और वसन्त ऋतु को छोड़कर और महीनों में नदी का पानी पीने योग्य है--

पानीयं पानीयं शरदि वसन्ते च पानीयम्।
नादेयं नादेयं शरदि वसन्ते च नादेयम् ॥

यानी कोई कहता है, हम तो सदा ताजा पानी पीते हैं और इसके सैकड़ों फायदा बतलाता है। दूसरे कहते हैं हम तो जाड़े में भी ठंडा पानी पीते हैं और गरमियों में तो बिना बर्फ प्यास बुझती ही नहीं। इतने में एक अँगरेजी पढ़े वहाँ बैठे थे,बोले--आपको मालूम नहीं, कितने निहायत बारीक कीड़े पानी में रहते हैं। इसलिए इसे छान लेना बहुत जरूरी है। लिखा भी है--

वस्त्रपूतं पिवेज्जलम्।

मैंने तो एक फिलटर खरीदा है उसी में छान बिल्लौर ग्लास में पानी पीता हूँ। बर्फ के साथ शीशे के ग्लाश में पानी रख पीने में बड़ा मजा मिलता है। इतने में एक चौथे साहब बोल उठे- हमको ये सब खटराग मालूम होता है। यहाँ तो खरा खेल फरुखाबादी पसन्द आता है। प्यास ने सताया तो दो आने फेंक दिये, सोडावाटर का बोतल मुँह में लगाया घट्ट-घट्ट उतार गये, कलेजा तर हो गया। इतने में एक पाँचवें साहब जो वहाँ मौजूद थे, कहने लगे- हे भगवान्! धर्म के अब तुम्हीं रक्षक हो। न जानिये कैसा समय आया है कि अँगरेजी पढ़-पढ़ लोग भ्रष्ट हो जाते हैं। अपने तो कैसी ही प्यास लगी हो बिना चरणोदक मिलाये जल कभी नहीं पीते।

अब सोने को लीजिये। पंसेरियों खटमल से लदी हुई टूटी खाट से ले उमदा पलंग, ईजी-चेयर और कोच तक न जानिये कितने खटराग रचे गये हैं। सो बस इस रुचि ही के भाँति-भाँति के ईजाद हैं। इतने पर भी जब नींद का झोंका आता है तब यह रुचि यहाँ तक बेहया बन जाती है कि कंकड़ पर भी ,सोइये तो मखमली कोच का मजा मिलता है।--

निद्रातुराणां न च भूमिशय्या।

ऐसे भी जिद्दी सोनेवाले मनहूस पाये जाते हैं कि चलते-चलते सोते हैं, खाते-खाते सोते हैं, बातचीत करने में एक बात मुँह से निकली तो दूसरे में अन्तर्ध्यान हो गये।

अब पहनावे की लीजिए। लोग कहते हैं, यहाँ के लोग भद्दे हैं, फैशन नहीं जानते। पर यहाँ ग्रन्थ के ग्रन्थ नख-सिख सोलहों सिंगार के ऊपर लिखे गये हैं। यहाँ के अनगिनत किस्म के पोशाक और आभूषण जुदी-जुदी रुचि के अनुकूल गिनने लगें तो घड़ी न चाहिए, वरन् दिन का दिन समाप्त हो जाय। तो अब देर तक पढ़ने वालों को इस रुचि के भँवरजाल में फँसाय रखना और किसी दूसरे लेख के पढ़ने से वंचित रखना है, इसलिए इस सियापे को अब बन्द कर छोड़ते हैं। पढ़नेवालों की रुचि के अनुकूल फिर कभी निकालेंगे।

शब्दार्थ-टिप्पणी

उमदी अच्छाई, उत्तम **तारीफ** प्रशंसा **लुचुई** मैदे री पतली पूरी,लूची **तकल्लुक** उपनाम **बसोंधी** एक प्रकार की रबड़ी जो सुंधित होती है **पंसेरी** पाँच शेर **खटमल** खाट में उत्पन्न होने वाला कीड़ा जो मनुष्यों का खूँन चूसता है ईजाद आविष्कार

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) बालक हर काम में रुचि को कब जगह देता है ?

(2) रुचि को हम अपने जीवन में कहाँ-कहाँ जगह देते हैं ?

(3) फ्रांस और इग्लैंड की अमीर महिलाओं के बारे में हम क्या सुनते हैं ?

(4) लोग किस प्रकार से पानी पीना पसंद करते हैं ?

(5) रसोई रसायन कब होती है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) पानी के फायदे बताइए।

(2) अपनी रुचि के बारे में लिखिए।

(3) नींद का झोंका आता है तब नींद क्यों बेहया बनती है ?

योग्यता- विस्तार

- रुचि के बारे में लेखक के विचार अपने शब्दों में लिखिए।

•

5	ज्ञानोपदेश

ज्ञानोपदेश

ब्रह्मानंद स्वामी

(जन्म : सन् 1772 ई; निधन : सन् 1832 ई.)

गुजरात के स्वामीनारायण संप्रदाय के प्रसिद्ध कवि ब्रह्मानंद स्वामी का मूल नाम लाडू बारोट (गढ़वी) था। माना जाता है कि इनका जन्म आबू पर्वत की तलहटी में बसे खाणग्राम नामक गाँव में हुआ था और निधन सौराष्ट्र के मूली नामक स्थान पर हुआ था। कहते हैं कि सहजानंद स्वामी के दर्शन पाकर ये इतने आनंद विभोर हो गए कि इनके मुँह से ये शब्द निकल पड़े-'ज्ञान की कुंजी ने मेरी बुद्धि का ताला खोल दिया'। फलस्वरूप सन् 1805 ई. में ये स्वामीनारायण संप्रदाय में दीक्षित हो गए।

ब्रह्मानंद की कविता में प्रेम और भक्ति का बड़ा मार्मिक चित्रण हुआ है। राधा और कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का इन्होंने भाव-विभोर होकर हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। गुजराती के साथ इन्होंने ब्रज भाषा में भी विपुल मात्रा में कविताएँ लिखी हैं। हिन्दी में रचित मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं-'विवेक चिंतामणि,' 'उपदेश चिंतामणि,' 'ब्रह्म विलास,' 'नीति प्रकाश' इनकी कुछ रचनाओं में सद्गुरु की महिमा और माया के त्याग पर बल दिया गया है।

प्रस्तुत पद में कवि ने सांसारिक माया-मोह का त्याग कर फकीरों की तरह जीवन जीने का उपदेश दिया है। इसके लिए सच्चे सद्गुरु की शरण में जाना आवश्यक है। जो मनुष्य अपनी काया में छिपे चोरों पर विजय प्राप्त कर लेता है वह तीनों लोकों पर विजयी हो जाता है। उसके भीतर अनहद नाद बजने लगता है और समस्त सिद्धियाँ उसकी चेरी बन जाती हैं। ब्रह्मानंद स्वामी का यह पद कबीर के उस पद का स्मरण करा देता है जिसमें कबीर कहते हैं-'मन मेरो लागो यार फकीरी में'।

कर ले खूब फकीरी रे, बंदे कर ले खूब फकीरी।
अदल ब्रह्म अमीरी रे, बंदे कर ले खूब फकीरी॥
धर ले ध्यान अचल सद्गुरु का, दुबधा तज दिलगीरी रे।
पांच पचीस चोर या घट में, प्रगट लेत धन हेरी॥

याकुं मार पकड़ वश कर ले, तीन लोक जय तेरी रे।
किसके मातपिता सुत बंधव, किसकी माया मेरी।
याके संग लग्या क्या मोहवश, अवसर नावे फेरी रे॥
शरण पकड़ सद्गुरु साहेब की, छोड़ आश जग केरी।
अनहद नाद टकोरा बाजे, सुन ले गगन धुन गेरी रे।
अष्ट सिद्ध नव निध तेरे आगे, सबै होयगी चेरी।
ब्रह्मानंद झील निरशंसे, प्रेम उदधि की लहरी रे॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

बंदे भक्त **अदल** अविनाशी **अचल** स्थिर,दृढ़ **दुबधा** दुविधा, असंमजस **दिलगीरी** दिलवाला **घट** शरीर **हेरी** हर लेना **याकुं** उसको **फेरी** दुबारा **जगकेरी** संसार की **चेरी** दासी **निरशंसे** संशय **उदधि** समुद्र

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) ब्रह्मानंद ने अमीरी किसे कहा है ?

(2) ब्रह्मानंद किसका ध्यान करने के लिए कहते है ?

(3) तीनों लोक में जय-जयकार कब होगी ?

(4) ब्रह्मानंद किससे निकलने की बात करते हैं ?

(5) ब्रह्मानंद ने अपनी तुलना किससे की है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'ज्ञानोपदेश' के मूलभाव को स्पष्ट कीजिए।

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

धर ले ध्यान अचल सद्‌गुरु का, दुबधा तज दिलगीरी रे।
पांच पचीस चोर या घट में, प्रगट लेत धन हेरी ॥
याकुं मार पकड़ वश कर ले, तीन लोक जय तेरी रे॥

योग्यता-विस्तार

- ज्ञानोपदेश से संबंधित किसी अन्य संत कवि की कविता ढूँढ़कर पढ़िए।

•

6 अभय साधक - बाबा आमटे

न्यायाधीश चंद्रशेखर धर्माधिकारी
(जन्म : सन् 1927 ई.)

चंद्रशेखर धर्माधिकारी का जन्म मध्यप्रदेश के रायपुर में हुआ था। उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से एम.ए., एल.एल.बी. किया था। उन्होंने 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आंदोलन में भी भाग लिया था। सामाजिक सरोकारों से भी वे बराबर जुड़े रहे। एक सफल वकील और न्यायाधीश के साथ-साथ वे एक अच्छे लेखक भी हैं। उन्होंने हिन्दी, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी में लेखन-कार्य किया।

हिन्दी में उन्होंने कई ग्रंथ लिखे जिनमें 'अंतर्याता', 'न्यायमूर्ति का हलफनामा', 'लोकतंत्र एवम् राहों के अन्वेषी', 'समाजमन' एवं 'सहप्रवास' मुख्य हैं। 'माणूस नामा' और 'शोध गाँधीचा' मराठी में लिखित प्रमुख ग्रंथ हैं।

जीवन-कथा के इस अंश में जीवनीकार ने सुप्रसिद्ध समाजसेवी बाबा आमटे के परोपकार एवं निस्वार्थ त्यागवृति से परिपूर्ण जीवन का बड़ी बारीकी एवं ईमानदारी से आलेखन किया है। 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन में सक्रिय रूप से शामिल होने से वे पहलीबार प्रकाश में आए उसके बाद जीवन पर्यंत समाज के हर दीन-दुखी वर्ग की समर्पण भाव से सच्ची सेवा की। उन्होंने दलितों, विकलांगों, अनाथ बच्चों, वृद्धों एवं गंभीर रोगों से पीड़ित लोगों की व्यक्तिगत रूप से और अनेक सामाजिक संस्थाएँ बनाकर अथाक सेवा-सुश्रुसा की। 'मानव बचाओ' और 'पर्यावरण बचाओ' उनका मूल मंत्र बन गया था। इसके लिए उन्हें अनेक बड़े-बड़े पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुए बाबा के इस मानव सेवा के काम में उनके पूरे परिवार ने भी तन-मन-धन से सहयोग दिया। लेखक ने बाबा की जीवन-यात्रा को सहज ही सजीव कर दिया है।

---

26 दिसम्बर 1904 को हिंगणा घाट में, एक कर्मठ परिवार में, मुरलीधर उर्फ बाबा आमटे का जन्म हुआ। परिवार सुखी था। बाबा ने बी.ए., एल.एल.बी. की उपाधि प्राप्त की। वरोरा में उन्होंने वकालत शरू की। बाद में 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू हुआ और वे उसमें कूद पड़े। जेल गए। एक युवा स्त्री को तकलीफ देने वाले ब्रिटिश सैनिकों से अकेले भिड़ पड़े। इसीलिए गांधीजी ने उन्हें 'अभय साधक' कहा था। 1947 में वे वरोरा नगर परिषद के उपाध्यक्ष बने। मेहतर संगठन के वे अध्यक्ष थे। उनके जीवन से तादात्म्य हो इसलिए, उन्होंने मेहतरों के साथ, भंगी का काम करना शुरू किया। एक दिन बरसते पानी में वे सर पर मैले का टोकरा लिए जा रहे थे कि इनका ध्यान गटर में पड़े एक आदमी की ओर गया। वह महारोगी था। शरीर पर कई जख्म थे और उनमें कीड़े रेंग रहे थे। उनके लिए वह साक्षात्कार का क्षण सिद्ध हुआ। उनकी पूरी जिन्दगी ही बदल गयी। 1949 में बाबा ने 'स्कूल ऑफ ट्रॉपिकल डिसीजेस' संस्था में, महारोग का इलाज कैसे करें, इसका अध्ययन पूरा किया। तत्सम्बन्धी प्रतिबन्धक दवाई तैयार करने के लिए, अपने शरीर का उपयोग करने की तैयारी तक उन्होंने दर्शाई। 1950 में बाबा ने 'महारोगी सेवा समिति' नामक संस्था की नींव चन्द्रपुर जिले के वरोरा में रखी। इसके बाद का बाबा आमटे का जीवन एक 'खुली किताब' है सभी लोग उस कर्मठ जीवन के बारे में जानते हैं। जिस क्षण उन्होंने महारोगी के शरीर पर टाट का कपड़ा डाला, उस क्षण उनके जीवन की अभय साधना शुरू हुई, ऐसा खुद बाबा ही कहते हैं। जब इन्दु घुले नामक कर्मठ वेद शास्त्र-सम्पन्न परिवार में जन्मी लड़की ने बाबा से एक अलग ढंग का विवाह किया, तभी 'अभय और साधना' का सच्चा मिलन हुआ। वे 'संयुक्ताक्षर' बन गए। जमीन सम्बन्धी मिला हुआ पुश्तैनी अधिकार, उन्होंने सहज त्याग दिया। बाबा आमट ने जीवन के हर अंग को स्पर्श किया। अनाथ लड़को के लिए 'गोकुल' शुरू किया और वृद्धों के लिए 'उत्तरायण'। प्रज्ञाचक्षु (दृष्टिहीन)लोगों के लिए 'आनन्द अन्ध विद्यालय' की स्थापना की। अपंगों को मौका मिले, इसलिए 'सन्धि निकेतन' स्थापित किया। श्रमिक विद्यापीठ की कल्पना रखी, आनन्द निकेतन महाविद्यालय भी स्थापित किया। आनन्द मूक विद्यालय के साथ सोमनाथ, हेमलक सा, अशोक वन आदि प्रकल्प खड़े किए। वस्तुत: आमटे ने समग्र जीवन का एक समग्र नक्शा तैयार किया। 'भारत छोड़ो' के बाद जब औरों ने 'भाारत छोड़ो' का उद्योग प्रारम्भ किया तब बाबा ने 'भारत छोड़ो' अभियान का प्रारम्भ किया। बाबा यानी युवकों के प्रेरणा स्रोत। सोमनाथ में हर साल 'श्रम संस्कार छावनी' के नाम से युवकों का शिबिर लगता है। 'शान्ति द्वारा शान्ति' नामक अनोखे अभियान के तहत उन्होंने पंजाब के 52 देहातों का दौरा किया। बाबा को कई पुरस्कार मिले। पद्मश्री, पद्मविभूषण, राष्ट्रभूषण, जमनालाल बजाज पारितोषिक, पुणे और नागपुर विद्यापीठ की डी. लिट् पंजाबराव कृषि विद्यापीठ की उपाधि 'कृषि-रत्न', सामाजिक न्याय के लिए रामशास्त्री प्रभुणे पुरस्कार, डेमियन डेरेन पारितोषिक (अमेरिका) महाराष्ट्र शासन

का राष्ट्रीय पुरस्कार, एन.डी. दिवाण पारितोषिक (नासेओह पारितोषिक समिति), मैगसेसे अवॉर्ड, महात्मा गाँधी पुरस्कार इत्यादि। लेकिन बाबा का सच्चा पुरस्कार है, उनके दोनों सुपुत्र और बहुएँ भारती तथा मन्दा तथा उनके पौत्र और पोती। विकास-प्रकाशन ने अनन्द वन, सोमनाथ, अशोक वन, भामरागड़ के प्रकल्प जिस उत्साह और जोश के साथ अपने कन्धों पर उठाए, उन्हें विकसित किया, उसका कोई सानी नहीं। महारोगी और आदिवासी क्षेत्र में काम करने वाले पिता की, उसी काम में, हाथ बँटाने वाली सन्तान गूलर का फूल मानी जाती है। लड़के डॉक्टर और बहुएँ भी डॉक्टर ! सभी को सही अर्थ में समाज-स्वास्थ्य की चिन्ता है। पुरस्कार तो उन्हें भी बहुत मिले। ख्याति भी बहुत मिली, लेकिन उनकी दृष्टि में 'आनन्द वन' का विस्तार होना समाज के लिए भूषण वह नहीं है। वह समाज में बढ़ते अनारोग्य का लक्षण है। वे सारे यह सपना देखते हैं कि यह आनन्द वन मिट जाए और ऐसे आनन्द वन की जरूरत न रहे, ऐसी समाज-व्यवस्था निर्मित हो। विज्ञान यह कहता है कि महारोग अन्य रोगों जैसा ही एक रोग है। लेकिन जैसा कि गांधीजी कहते हैं, शरीर के महारोग से बदतर है, मन का महारोग। कुष्ठ रोगियों को समाज में फिर से सम्मान पूर्वक जीना नसीब हो, इसलिए उनसे दोस्ती करने वाले लोग चाहिए। ऐसे कई दोस्त बाबा के काम से जुड़े । उनमें अण्णा साहब सहस्त्रवुद्धे, पु.ल. देशपांडे, सुप्रसिद्ध गायक वसन्तराव देशपांडे, राम शेवालकर, तो थे ही, लेकिन इन्दौर के सुप्रसिद्ध पत्रकार तथा साहित्यिक राहुल बारपुते, बाबा डिके, कुमार गन्धर्व और उनके साथ मेरे जैसे भी कोई दोस्त थे। हर साल महारोगियों के साथ, आनन्द वन में, हम सभी का मित्र-मिलन होता था। जिसके बारे में सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी एस. एम. जोशी जी ने कहा था कि, 'जब-जब जिन्दगी की बैटरी क्षीण हो जाए तब उसे 'चार्ज' करने के लिए आनन्द वन के मित्र-मिलन में आना चाहिए।' देश में मौजूद सभी समस्याओं से बाबा सक्रियता से जुड़ते थे। बाबा आमटे जमा-खर्च का हिसाब रखकर जीने वालों लोगों में से नहीं थे। बहुत जिद्दी-से थे। मन में सहज ही यह बात आ जाती है कि इसीलिए तो वे बाबा आमटे हैं- हम जैसों से कई मायने में अलग और अकेले। बाबा ने कई अनाथ बच्चों को और महारोगियों के लड़कों को अपने परिवार में शामिल कर लिया। उनके माँ-बाप के रूप में साधना ताई का और अपना नाम दिया। जब तक वे हैं तब तक कोई अनाथ नहीं, यह उन्होंने अपने वर्ताव से सिद्ध कर दिया। उन्हें बाड़ पर बैठकर काम करना नहीं आता। वे दूर खड़े दर्शक नहीं, प्रतिभागी और सहयोगी बनकर जीना चाहते थे।

1 अप्रैल, 1984 को बाबा ने गढ़चिरौली जिले में 'जंगल बचाओ-मानव बचाओ' समिति की ओर से एक मोर्चा आयोजित किया था। वे इन्द्रावती नदी पर बनने वाले इंचमपल्ली बाँध और भोपालपट्टम बाँध का तीव्र विरोध कर रहे थे। आजकल क्षीण होते जंगल और वन्य जीवन, आदिवासियों की दरिद्रता की तरह बाबा को बेचैन करते थे। जुलाई 1988 में पर्यावरणवादियों की, आनन्द वन में एक परिषद हुई। बड़े बाँधों का विरोध क्यों ? इसका एक घोषणा-पत्र तैयार किया गया। बड़े बाँधों के कारण देश की नैसर्गिक साधन सम्पत्ति नष्ट होने से लाखों लोग विस्थापित हो रहे हैं। जमीन और पानी के आधार पर विकसित 'सभ्यता' समाप्त हो रही है। दूसरी ओर बाँधों के निर्माण के लिए हम अन्य देशों से भीख माँग रहे हैं। यह जो सब कुछ हो रहा है, वह शहरवासियों को, धन्वतों को और प्रस्थापितों को अधिकाधिक अमीर बनाने के लिए हो रहा है। अकाल छाया से देश को मुक्त करने के बजाय उसे अकाल की खाई में ढकेला जा रहा है। बाढ़ नियन्त्रण के बजाय बाढ़ें लगातार आ रही हैं। सामान्य लोगों की जीवन-रेखा उन्नत होने के बजाय वे, बेघर और विस्थापित होते जा रहे हैं, ऐसी स्थिति उस घोषणा-पत्र में व्यक्त की गई थी। बाबा के शब्दों में 'शोषण से जो समृद्ध होता है, वह समाज को एक शाश्वत अँधेरा देता है।' विस्थापित आज तक कभी पुनर्स्थापित नहीं हो सके, यह कटु सत्य है। इसलिए बाबा कहते हैं-'जहाजों के साथ अपने आपको डूबा देनेवाले कर्णधार जहाँ होते हैं वहीं पर डूबते देश को बचाने वाली नाविकों की पीढ़ियाँ जन्म लेती हैं।' बाबा ऐसे ही 'नाविक' थे।

आनन्द वन की 'अनाम वृक्ष स्मरणशिला', 'बालतरु की पालकी' और 'वृक्ष का जुलूस' एक ओर निसर्ग प्रेम का आविष्कार था, तो दूसरी तरफ पर्यावरण के संरक्षण का श्रीगणेश भी था। मित्र मिलन में डॉ. वसन्तराव देशपांडे, डॉ. रूपा कुलकर्णी ने बालतरु के गीत गाए। गोकुल की अनाथ 'धरती' को पालने में सुलाया। निसर्ग से जुड़ा हुआ और अनाथों से नाता जोड़ने वाला ऐसा समारोह मैंने अन्यत्र कहीं नहीं देखा। साक्षी रूप पु. ल.देशपांडे और मुझ जैसे पालकी के भक्त करताल बजाने वाले और कंठीधारी। किसी की भी नजर लगे, ऐसा समारोह होता था वह। उसमें महारोगी भी शामिल होकर गाते थे। वहाँ गाने के लिए गला सुरीला होना जरूरी नहीं था, जरूरी था अच्छा दिल होना। इसलिए बाबा कहते थे- 'आनन्द वन के रोग से आनन्द वन का आत्म विश्वास ज्यादा प्यारा है।' और 'सच्चे कलाकार की कला गाय के पन्हाने जैसी होती है, जो अपने आप फूट पड़ती है।'

नवम्बर 1972 में सोमनाथ में विदर्भ साहित्य सम्मेलन का आयोजन हुआ। अध्यक्ष थे श्री विश्राम बेडेकर और उद्घाटक थे प्रो. नरहर कुरुन्दकार। उस सम्मेलन में, लेखक का आविष्कार स्वतन्त्रता पर एक परिचर्चा हुई, जिसका मैं अध्यक्ष था। तब सम्म्लेन में उपस्थित साहित्यकारों से बाबा ने एक सवाल किया,''अजन्ता और एलोरा में कई भग्न मूर्तियाँ हैं, चित्र हैं। सारी दुनिया के रसिक लोग उनमें होने वाला भग्न और नष्टप्राय हिस्सा अपनी कल्पना से भर देते हैं और उन कलाकृतियों का आनन्द उठाते हैं। अगर पत्थरों की भग्न पाषाण मूर्तियाँ सौन्दर्य तथा आस्वाद का विषय बन सकती हैं तो फिर जिसके अंग

अवयव भग्न हुए हैं, या गल गए हैं; वह महारोगी आस्वाद का विषय क्यों नहीं हो सकता ? उसका जो अंग गल गया है, उसे आप अपनी कल्पना से पूरा कर दीजिए। लेकिन मेरा दु:ख यह है कि रसिक से रसिक आदमी के लिए भी यह सम्भव नहीं होता ! ऐसा क्यों है ?'' उपस्थित यह प्रश्न उनके जीवन का यक्ष प्रश्न है। सभी दु:खों को दया और दान की भूमिका से देखनें के बजाय, सहजीवन और सहसंवेदना की भूमिका से देखकर, उनकी अस्मिता जगाने वाला. मेरे जीवन में मिला हुआ पहला आदमी था- बाबा आमटे। उन्होंने मुझे इस प्रश्न की ओर देखने की एक नई दृष्टि प्रदान की। महारोगी, अनाथ, अन्ध और दु:खी आदमी अपने इस देश में भी अस्मिता की खोज में है। वे प्रतिष्ठित रूप में जीएँ, खुद के पैरों पर खड़े रहें, किसी के सामने भीख के लिए हाथ न फैलाएँ यह भूमिका बाबा मम भाव से साकार करते रहे। शरीर से अपंग परन्तु मन से मजबूत महारोगियों की ओर से शरीर से सुदृढ़ और मन से अपंग मुझ जैसे कई लोगों को बाबा ने, इन्हीं महारोगियों की सहायता से, एक नई दुनिया कैसे बनायी जाती है और उनके अपने कैसे सत्य किए जा सकते हैं, इसका पाठ पढ़ाया। बाबा का एक प्रसिद्ध वाक्य है, ''जिन्हें वेदना का वरदान नहीं वे शरीर से उन्मत्त हैं और जो यातनाहीन हैं, वे सपने नहीं, देख सकते।'' अनन्त: अन्धकार देखने के लिए भी आँखों में प्रकाश चाहिए। हर बार नई योजनाएँ बनाना, समाज के सभी स्तरों के लोगों को खासकर युवकों को उसमें समाविष्ट कर लेने की प्रेरणा देना, उन योजनाओं को यथार्थ में उतारना और दु:खी तथा रोगी लोगों को नया जीवन प्रदान करना, ये काम बाबा निरन्तर करते आए हैं। उनका नारा है,'हाथ लगे निर्माण में, नहीं माँगने, मारने में।'

हाथ 'निर्माण' के लिए है, किसी पर 'उठाने' के लिए नहीं; यह नारा युवकों के लिए नया था। सेवा करने वालों के लिए भी उन्होंने कुछ सवाल रखे। समाज में दैन्य ओर दु:ख किसने पैदा किए। वह कौन-सी ताकत है जो लोगों के जीवन का हक छीन लेती है और अनाथ तथा दु:खी लोगों की संख्या बढ़ाती रही है ? भूख से बेहाल लोगों के मुँह का कौर कौन छीन लेता है ? रोजी-रोटी पहले छीन ले और फिर उसी रोटी का एक टुकड़ा दान के तौर पर फेंककर पुण्य कमाने वाला, यह समाज आखिर कैसा समाज है ? ये लोग बिना खैरात या बिना भीख माँगे जीने का हक प्राप्त कर सके, उसका उपभोग कर सके ऐसा समाज वे बनाना चाहते थे। उनका यह सपना था। बाबा खुद अच्छे कवि और साहित्यकर्मी थे। और सपनों को साकार करने की शक्ति उनमें थी। ऐसे बाबा का निधन 9 फरवरी 2008 को हुआ। लेकिन हमारी मान्यता है कि 'मृत्यु' से ऐसे महान व्यक्ति तथा उनका कर्तृत्व समाप्त नहीं होता। इसीलिए हम महान व्यक्तियों की जयन्ती मनाते हैं। यह जन्म शताब्दी बाबा आमटे के कार्य को और उजागर करेगी, यह मेरी भावना है। अबू आदम् के शब्दों में, उनके बारे में इतना ही कहूँगा कि उनकी प्रजाति की वृद्धि हो।

शब्दार्थ-टिप्पणी

मेहतर सफाई कामकरने वाला **नैसर्गिक** प्राकृतिक **बदतर** बुरे से बुरा **विस्थापित** मूल स्थान से उखड़ा हुआ

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) बाबा आमटे का जन्म कहाँ हुआ था ?

(2) गांधीजी ने बाबा आमटे को 'अभय साधक' क्यों कहा था ?

(3) बाबा का ध्यान गटर में किस पर पड़ा ?

(4) बाबा ने किस संस्था की नींव रखी थी ?

(5) आमटे ने भारत जोड़ो अभियान कब प्रारंभ किया ?

(6) बाबा किन-किन पुरस्कारों से पुरस्कृत हुए ?

(7) बाबा सच्चा पुरस्कार किसे मानते हैं ? क्यों ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) बाबा कैसी समाज व्यवस्था चाहते हैं ?

(2) बाबा कैसा जीवन जीना चाहते थे ?

(3) बाबाने गढ़चिरौली जिले में क्या आयोजित किया था ?

(4) विदर्भ साहित्य सम्मेलन में बाबा ने क्या सवाल किया था ?

योग्यता- विस्तार

- कुष्ठ रोगियों के अस्पताल या आश्रम की मुलाकात लीजिए।
- बाबा आमटे जैसे अन्य समाजसेवी की जीवनी पढ़िए।

•

7 भारतमाता

सुमित्रानंदन पंत

(जन्म : सन् 1900 ई; निधन : सन् 1977 ई.)

छायावादी कवि पंतजी का जन्म अल्मोड़ा के कौसानी नामक गाँव में हुआ था। बचपन में ही माता के वात्सल्य का साया उठ गया अत: पिता और दादी ने पाल-पोष कर बड़ा किया। पल-पल अपना नवीन साज सँवरती कूर्मांचल की पर्वत-श्री ने उनके हृदय को इस कदर प्रभावित किया कि प्रकृति ही उनकी कविता की मूल प्रेरणा बन गई। उनकी प्रथम दौर की कविताओं में प्रकृति के विविध रंगी चित्र अंकित हैं। उनकी कविता समय-समय पर नये मोड़ लेती रही है। छायावाद से कवि प्रगतिवाद की ओर मुड़ा और अंत में आध्यात्म की ओर आकृष्ट हुआ। निराला की तरह पंतजी ने भी छन्द के रजतपाश तोड़े लेकिन लय को नहीं छोड़ा। उनकी कविता की भाषा में सहजता और सुकुमारता का सुंदर समन्वय हुआ है।

उनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं- ग्रंथि, वीणा, पल्लव, गुंजन, युगांत, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, कला और बूढ़ाचाँद, लोकायतन और चिदंबरा। 'कला और बूढ़ाचाँद' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी और 'चिदंबरा' के लिए उन्हें भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

'ग्राम्या' नामक संग्रह में संकलित 'भारतमाता' कविता में भारतमाता को संपूर्ण भारत का प्रतीक बतलाते हुए अनेकविध अभावों से ग्रस्त, दीन-हीन, तापित-शापित, शोषित-प्रताड़ित भारतवासियों के जीवन का यथार्थ चित्रण हुआ है। पराधीनता के पाश में जकड़ी हुई भारतमाता का ग्रामीण अंचल नई सभ्यता और संस्कृति के आलोक से वंचित है। यद्यपि उसके पास गीता का ज्ञान है, जीवन-विकास का मंत्र भी है किंतु इस समय जीवन के बहुमुखी विकास के लिए देशवासियों के दृढ़-संकल्प और सशक्त संगठन की आवश्यकता है। कवि इस कविता द्वारा देश को जगाना चाहता है। संस्कृत गर्भित-सामासिक शब्दावली के बावजूद कविता सहज संप्रेषणीय बन पड़ी है।

भारत माता
ग्राम वासिनी!
खेतों में फैला दृग श्यामल
शस्य भरा जन जीवन आंचल
गंगा यमुना में शुचि श्रम जल
शील मूर्ति,
सुख दुख उदासिनी!
स्वप्न मौन, प्रभु पद नत चितवन,
होंठों पर हँसते दुख के क्षण,
संयम तप का धरती सा मन,
स्वर्ग कला,
भू पथ प्रवासिनी!
तीस कोटि सुत, अर्ध नग्न तन,
अन्न वस्त्र पीड़ित, अनपढ़, जन,
झाड़ फूस खर के घर आँगन,
प्रणत शीष
तरुतल निवासिनी!
विश्व प्रगति से निपट अपरिचित,
अर्ध सभ्य, जीवन रुचि संस्कृत,
रूढ़ि रीतियों से गति कुण्ठित,

राहु ग्रसित
शरदेन्दु हासिनी!
सदियों का खँडहर, निष्क्रिय मन,
लक्ष्य हीन, जर्जर जन जीवन,
कैसे हो भू रचना नूतन,–
ज्ञान मूढ़
गीता प्रकाशिनी !
पंचशील रत, विश्व शान्ति व्रत,–
युग युग से गृह आँगन श्रीहत,
कब होंगे जन उद्यत जाग्रत ?
सोच मग्न
जीवन विकासिनी!
उसे चाहिए लौह संगठन,
सुन्दर तन, श्रद्धा दीपित मन,
भू जीवन प्रति अथक समर्पण,
लोक कलामयि,
रस विलासिनी !

शब्दार्थ-टिप्पणी

शस्य खेती, नई घास, फसल **शुचि** पवित्र **खर** तृण,घास **प्रणत** झुका हुआ **शरदेन्दु** शरद ऋतु का चन्द्रमा

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) गंगा यमुना का जल कैसा है?
(2) भारत माता के मन की उपमा किससे दी गई है?
(3) प्रवासिनी भारत माता के पुत्र किस हालत में हैं?
(4) 'राहु ग्रसित शरदेन्दु हासिनी।' का अर्थ बताइए।
(5) भारत माता किस सोच में डूबी हुई है?

2. उत्तर लिखिए :

(1) भारत माता की निराशा का कारण बताइए।
(2) 'कब होंगे जन उद्यत जाग्रत?' पंक्ति में निहित राष्ट्र प्रेम को स्पष्ट कीजिए।

योग्यता-विस्तार

- पंत के समकालीन किसी कवि की देश प्रेम की कविता को खोजकर पढ़िए, समझिए और इस कविता से उसकी तुलना कीजिए।

•

8	# मजबूरी

मन्नू भंडारी
(जन्म : सन् 1931 ई.)

सुप्रसिद्ध कथाकार मन्नूजी का जन्म मध्यप्रदेश के भानपुरा में हुआ था। लिखने की प्रेरणा उन्हें अपने पिता सुखसंपत्तिराय भंडारी से मिली, जो हिन्दी के प्रथम पारिभाषिक शब्दकोश के निर्माता थे। कोलकाता और दिल्ली में उन्होंने अध्यापन कार्य किया। वे प्रेमचंद सृजनपीठ की निदेशिका भी रहीं।

उन्होंने कहानी और उपन्यास के साथ-सात नाटक भी लिखे। उन्होंने नारी जीवन की समस्याओं का उद्‌घाटन एवं स्त्री-पुरुष संबंधों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण बड़ी सहजता से किया है। उन्होंने 'एक इंच मुस्कान' नामक उपन्यास की रचना अपने पति राजेन्द्र यादव (हिन्दी-कथाकार)के साथ मिलकर की।'आपका बंटी' एवं 'महाभोज' उनके बहुचर्चित उपन्यास हैं।'मैं हारगई', 'एक प्लेट सैलाब','यही सच है', 'त्रिशंकु' कहानी संग्रह हैं।'बिना दीवारों के घर' और 'महाभोज' उनके बहुमंचित नाटक हैं। उनकी कई रचनाओं का फिल्मांकन भी हुआ है।

प्रस्तुत कहानी में एक बूढ़ी अम्मा (दादी) की अप्रितम ममता का हृदय-स्पर्शी चित्रण किया गया है। चलने-फिरने से लाचार बीमार बूढ़ी अम्मा अपने बेटे और पोते (बेटू) के बम्बई से आने पर खुशी के मारे पागल हो जाती है और अपना दुख-दर्द सब भूल जाती है। बहू को दूसरा बच्चा होने वाला है इस बहाने वह बेटू को अपने पास रख लेती है और बेहद लाड-प्यार करती है। लेकिन जब बहू बेटू को बम्बई ले जाने को कहती है तो उसके पाँवों तले की जमीन खिसक जाती है। बूढ़ी माँ और बेटू दोनों एक-दूसरे से जुदा होना नहीं चाहते। रमा बहू एक बार तो जोर-जबरजस्ती बेटू को ले भी जाती है लेकिन बेटू वहाँ बीमार हो जाता है और वापिस बूढ़ी माँ के पास लौट आता है। लेकिन दूसरी बार बहू बच्चे के भविष्य-निर्माण के बहाने उसे अपने साथ ले जाती है। इसबार बूढ़ी माँ भी मजबूरीवश अपने मन को जैसे-तैसे मना लेती है। वह बेटू के वहाँ रम जाने के लिए मनौतियाँ मानती है। यह पता चलने पर कि अबकी बार बेटू का मन वहाँ लग गया है वह प्रसाद चढ़ाती है। भीतर से आहत होकर भी बाहर खुशी प्रकट करना उसकी मजबूरी बन जाती है।

"बेटू को खिलावे जो एक घड़ी,
उसे पिन्हाऊं मैं सोने की घड़ी।
बेटू को खिलावे जो एक पहर,
उसे दिलाऊं मैं सोने की मोहर।"

बूढ़ी अम्मा ज़ोर-ज़ोर से यह लोरी गा रही थीं, और लाल मिट्टी से कमरा लीप रही थीं। उनके घोंसले जैसे बालों में से एक मोटी-सी लट निकलकर उसके चेहरे पर लटक आई थी, और उनके हिलते सिर के साथ हिल-हिलकर मानो लोरी पर ताल ठोंक रही थी। बरतन मलने के लिए आई हुई नर्बदा ने जो यह देखा तो हैरत में आ गई, बोली, "अम्मा, यह क्या हो रहा है ? कल तो गठिया में जुड़ी पड़ी थीं, दरद के मारे तन-बदन की सुध नहीं थी, और आज ऐसी सरदी में आँगन लीपने बैठ गईं !"

एक क्षण को अम्मा का हाथ रुका, फिर पुलकित स्वर में वे बोलीं, "अरी नर्बदा, मेरा बेटू आ रहा है कल!" और फिर गाने के लहजे में बोली, "बेटा मेरा आवेदा..."

"ओहो, तो रामेसुर लल्ला आ रहे हैं कल!" नर्बदा बोली।

"मैं कह नहीं रही थी कि छुट्टी मिली नहीं कि वह दौड़ा आएगा। अम्मा के मारे तो उसके प्राण सूखते हैं। इतना बड़ा हो गया, फिर भी यहाँ आएगा तो रात में एक बार मेरी गोदी में जरूर सोएगा। पर इस बार मैं कह दूँगी किं चल, मैं तुझे गोदी में नहीं लूँगी, अब तू गोदी में सोएगा कि बेटू ?"और वे हँस पड़ीं, जैसे कोई भारी मज़ाक कर दिया हो। फिर एकाएक काम का ख़याल आ जाने से बोलीं,"ले री, मैंने ख़ड़िया भिगो रखी है, ज़रा बाहर के आँगन को माँड दे। बस ऐसा माँडना कि सब देखते ही रह जाएँ। क्या करूँ , आजकल हाथ काँपने लगा है, नहीं तो मैं माँड लेती "

नर्बदा को खड़िया के काम में लगाकर वे फिर गाने लगीं :

"आओ री चिड़िया चून करो
बेटू ऊपर राइ-नून करो
नून करो-नून करो...

"ले, मैं तो भूल ही गई– क्या है इसके आगे ? रामेसुर छोटा था तो ढेरों याद थीं, उसके बाद तो छोटा बच्चा ही घर में नहीं रहा सो सब भूल गई। मेरा रामेसुर तो बिना लोरी सुने कभी सोता ही नहीं था, बेटू भी ज़रूर उसी पर पड़ा होगा। अब तो दौड़ता–फिरता होगा आँगन में।" और उनकी धुंधली आँखों के आगे जैसे दौड़ते फिरते बेटू के चित्र बनने–बिगड़ने लगे। उसी कल्पना में खोई–खोई वे बोलती गईं, "पहले बहू लेकर आई थी तब तो दो महीने का था, बस पालने में पड़ा–पड़ा हाथ–पैर मारता था और मैं जाकर खड़ी हो जाती थी तो टुकुर–टुकुर मुझे ही निहारा करता था। सूरत भी एकदम रामेसुर पर ही पड़ी है उसकी। अब तो खुद देख लेना, सारा घर नापता फिरेगा।" और वे हँस पड़ीं। इन सब कल्पनाओं से ही उनका शरीर रोमांचित हो उठा।

अम्मा का काम समाप्त हुआ तो मिट्टी में सनी दोनों हथेलियों को ज़मीन पर पूरे जोर से टिकाते हुए उन्होंने उठने का प्रयत्न किया, पर एक सर्द आह–सी उनके मुँह से निकलकर रह गई। वे उठ नहीं पाईं तो बड़े ही कातर स्वर में बोलीं,"अरे नर्बदा, मुजे ज़रा उठा दे री, घुटने तो जैसे फिर जुड़ गए।"

"जुड़े तो सही। ऐसी सर्दी में कब से मिट्टी में सनी बैठी हो बेटे–बहू आ रहे हैं तो ऐसी क्या नवाई हो रही है ? सभी के घर आते हैं ?" और नर्बदा ने अम्मा को सहारा देकर उठाया, उसके हाथ धुलाए और खटिया पर लिटा दिया।

"तू भी कैसी बात करती है नर्बदा ? तीन बरस बाद मेरा बेटा आ रहा है, और मैं आँगन भी न लीपूं ?"

"तीन बरस बाद आ रहा है तो मैं तो यही कहूँगी कि उनमें मोहमाया नहीं है। तुम यों ही मरी जाती हो उसके पीछे।"

"देख नर्बदा, मेरे रामेसुर के लिए कुछ मत कहना। यह तो मैं जानती हूँ कि तीन–तीन बरस मुझसे दूर रहकर उसके दिन कैसे बीतते हैं,पर क्या करे, नौकरी तो आख़िर नौकरी है। मेरे पास आज लाखों का धन होता तो बेटे को यों नौकरी करने परदेश नहीं दुरा देती, पर– " और उनके कुछ क्षण पहले पुलकते चेहरे पर मायूसी छा गई। आँखें अनायास ही डबडबा आईं।

नर्बदा यहाँ बरसों से काम करती है, अम्मा के लिए उसके मन में अपार श्रद्धा है, पर बेटे के प्रसंग को लेकर वह जब–तक उनका दिल दुखा दिया करती है। कुछ और खरी–खोटी सुनाने का उसका मन हो रहा था, पर आज वह मानो अम्मा पर तरस खाकर चुप रह गई। जब तक वह काम करती रही, अम्मा शून्य में ताकती जाने क्या सोचती रहीं, बोलीं एक शब्द भी नहीं। जब वह जाने लगी तो न चाह कर भी उन्हें कहना पड़ा,"तू जाते समय ग्वाले को कहती जाना कि कल दूध जल्दी दे जाए,और अब दूध ज़्यादा लगेगा। बच्चे वाले घर में तो दूध पूरा ही रहना चाहिए। और जब तक वे लोग यहाँ रहें, तब तक तू चौका–बर्तन करके यहीं रहा करना! घर में पाँच प्राणी रहते हैं तो काम तो निकल ही आता है, फिर बच्चे का साथ रहेगा। लेन–देन की चिन्ता मत करना, मैं रामेसुर को एक कहूँगी तो वह पाँच देगा।"

कुछ तो गठिया के दर्द ने और कुछ नर्बदा की बातों ने अम्मा का उत्साह तोड़ दिया। बहुत–से काम उन्होंने सोच रखे थे, पर वे कुछ न कर सकीं। बस अपनी खाट पर पड़े–पड़े भूली–बिसरी लोरियाँ याद करके गुनगुनाती रहीं। धीरे–धीरे रात के अंधकार में उसके मन की मायूसी भी डूब गई और वे भोर होने के पहले ही उठ बैठीं। घुटने का दर्द मन के उत्साह में खो गया, और बेटे–पोते से मिलने की उमंग में मौसम की ठंडक भी जैसे जाती रही। सात बजते–बजते तो वे सब घर ही पहुँच जाएँगे। साथ छोटा बच्चा है, दूध तो गरम करके रख ही दूँ। फिर उन दोनों को भी तो चाय की आदत होगी, ऐसी सर्दी में चाय तैयार नहीं मिलेगी तो अम्मा को क्या कहेंगे भला ?" दूसरा चूल्हा भी जला दूँ, नहाने को गरम पानी भी तो चाहिए।

उस कड़कड़ी सर्दी में ठिठुरते–ठिठुरते अम्मा ने बेटे–बहू को गरम पानी करने के सारे आयोजन कर डाले। फिर सोचा–लगे–हाथ तरकारी भी काट दूँ, नहीं तो वे इधर आएँगे और उधर मैं चूल्हे में सिर देकर बैठ जाऊँगी। तीन बरसों में मेरा बेटा आ रहा है, घड़ी–दो–घड़ी उससे बात भी करूँगी ? इनका क्या, ये तो अपनी राजी–खुशी पूछकर औषधालय चल देंगे। तरकारी भी कट गई–अब क्या करे ? अम्मा अपने को इतना व्यस्त कर देना चाहती थीं, जिससे प्रतीक्षा के बोझिल क्षण महसूस न हों, पर समय जैसे बीत ही नहीं रहा था! तभी दूर कहीं घोड़ों के घुंघरुओं की आवाज़ आई और तांगा अम्मा के घर के सामने रुका। अम्मा पागलों की तरह दरवाजे की ओर दौड़ पड़ीं। रामेश्वर की गोद से उन्होंने झपटकर बच्चे को ऐसे छीना, मानो किसी चोर–उचक्के के हाथ से अपने बच्चे को छीन रही हों, और कसकर उसे सीने से चिपका लिया। चरणछूते रामेश्वर की पीठ पर हाथ फेरते हुए दूसरे हाथ के घेरे में उसे लपेट लिया। बच्चा एकाएक इतना प्यार और शारीरिक कष्ट पाकर रो उठा और माँ के पास जाने के लिए मचलने लगा। वे उसके आँसू पोंछने लगीं, और उनकी अपनी आँखों से भी आँसू की धारा बहने लगी। पुचकारने पर भी जब बच्चा चुप नहीं हुआ तो बहू की ओर बढ़ाते हुए उन्होंने कहा,"अभी मुझे पहचानता नहीं। एक बार मुझे पहचानने लगेगा तो छोड़ेगा नहीं।" उपेक्षित–सी एक ओर ओर खड़ी बहू ने बच्चे को ले लिया।

चाय-पानी हो गया, और रामेश्वर नहाने चला गया तो अम्मा ने बहू को अकेले पाकर कहा, "ख़बर तो दी होती बहू, कि तुम्हारे महीने चढ़े हैं, कितने महीने हैं ?"

झेंपते हुए बहू ने उत्तर दिया, "यह भी कोई लिखने की बात थी अम्मा!" फिर ज़रा रुकते-रुकते कहा, मानो कहने का साहस बटोर रही हो, "अम्मा, इस बार बेटू को आप ही रखेंगी। जैसे भी हो, मैं यहाँ हूँ तब तक इसे अपने से हिला लीजिए। मैं तो इसके मारे ही परेशान थी, दो-दो को तो.."

अम्मा आँखे फाड़-फाड़कर ऐसे देख रही थीं मानो जो कुछ सुन रही हैं उस पर विश्वास करें या नहीं। फिर एकाएक बोल पड़ीं, "तुम कह क्या रही हो बहू, बेटू को मेरे पास छोड़ जाएगी, मेरे पास! सच ? हे भगवान, तुम्हारी सब बात पूरी हों। तुम बड़भागी होओ। मेरे इस सूने घर में एक बच्चा रहेगा तो मेरा जनम सफल हो जाएगा।" फिर वे एकाएक रो पड़ीं,"तुम क्या जानो बहू! अपने कलेजे के टुकड़े को निकालकर बम्बई भेज दिया। रामेसुर के बिना यह घर तो मसान-जैसा लगता है। ये ठहरे सन्त आदमी, दीन-दुनिया से कोई मतलब नहीं। मैं अकेली ये पहाड़ जैसे दिन कैसे काटती हूँ सो मैं जानती हूँ। भगवान तुम्हें दूसरा भी बेटा दें, तुम उसे पाल लेना! मैं समझूँगी, तुमने मेरा रामेसुर लेकर मुझे अपना रामेसुर दे दिया! पर देखो, अपनी बात से मुड़ना नहीं...मैं...मैं" तभी रामेश्वर ने ठिठुरते हुए रसोई में प्रवेश किया , "अम्मा, एक अंगीठी ज़रा इधर रख दो। बम्बई में रहकर तो सरदी सहने की आदत नहीं रही। यहाँ तो नहाते ही जैसे जम गया।" अम्मा ने अंगीठी रामेश्वर के पास सरका दी। तभी रामेश्वर का ध्यान अम्मा के कपड़ों की ओर गया, "यह क्या अम्मा, तुम कुछ भी गरम कपड़ा नहीं पहने हो! सरदी खा गईं तो बीमार पड़ जाओगी। फिर तुम्हें गठिया की भी तकलीफ़ है, ऐसे कैसे चलेगा? न हो तो बनवा लो कपड़े मैं रुपये दे दूँगा " पर वह सब अनसुना करके अम्मा बोलीं,"देख, आज बहू ने कह दिया है कि बेटू अब मेरे पास रहेगा, और अब जो बच्चा होगा वह तुम्हारे पास। तू कहीं टाल मत जाना, बात पक्की हो गई। आज से बेटू मेरा हुआ!"

"अरे, हम सभी तो तुम्हारे हैं, अम्मा, बोलो नहीं हैं?" परिहास के स्वर में रामेश्वर बोला!

"हो क्यों नहीं। मेरे नहीं तो और किसके हो! पर बेटू आज से मेरे पास रहेगा।" अम्मा ने कहा।

तभी वैद्यराज जी कुछ ख़ाली शीशियाँ लेकर आए तो अम्मा बोलीं, "सुनते हो जी, इस बार बेटू यहीं रहेगा। बेचारी बहू ख़ुद अभी बच्ची है, दो-दो को कैसे संभालेगी? और फिर पहले बच्चे पर तो यों भी दादी का हक़ होता है।"उनके हाथों की गति बढ़ गई थी और वे अब उठने-बैठने में ज़रा भी तकलीफ़ महसूस नहीं, कर रही थीं।

दोपहर को नर्बदा से भी कहा, "बहू के तो फिर बच्चा होने वाला है, बेचारी दो-दो को कैसे संभालेगी, सो मुझसे कहने लगी- अम्मा, बेटू को तो तुम्हें ही रखना पड़ेगा। उसे कहने में बड़ा संकोच हो रहा था कि मुझे बुढ़ापे में तरलीफ़ होगी, पर तू ही बता, घर के बच्चोंको रखने में कैसी तकलीफ़ भला! ऐसे समय में घर के ही लोग काम न आएँगे, तो कौन आएंगे भला?"

इसके बाद घर में जो कोई भी आया, उसे यही ख़बर सुनाई गई। अम्मा इस बात का इतना प्रचार कर देना चाहती थीं कि यदि फिर किसी कारण से बहू का मन फिर भी जाए तो शरम के मारे ही वह अपना इरादा न बदल पाए। अम्मा का सारा दिन बेटू को खिलाने में और उसकी नोन-राई करने में ही बीतता। जाने कैसी-कैसी औरतें घर में आती हैं, तंदुरस्त-सुंदर बच्चे को कड़ी नज़र से देख जाएँ तो लेने के देने पड़ जाएँ। बेटू को लेकर उनके शिथिल और नीरस जीवन में नया उत्साह आ गया था। घुटनों के दर्द के मारे कहाँ तो वे अपने शरीर का बोझ ही नहीं ढो पाती थीं, और कहाँ अब वे बेटू को लादे फिरती हैं। शाम को उसके साथ आँख-मिचौनी खेलती। बेटू का घोड़ा बनकर आँगन में दौड़तीं-फिरतीं। बेटू के साथ-साथ उनका भी जैसे बचपन लौट आया था। देखने वाले अम्मा के पागलपन पर हँसते, पर उसकी उन्हें ज़रा भी चिंता नहीं थी. रामेश्वर ने टोका, "अम्मा, क्यों उसे लादे फिरती हो, यों ही तुम्हारे घुटनों में दर्द रहता है।"तो बिगड़ पड़ी, "कैसी बातें करता है रामेसुर, इसमें भी कोई वज़न है जो उठाना भारी पड़े। फूल जैसा तो हल्का है, ख़ाली-ख़ाली दोनों बेला मिलते टोक दिया। माँ-बाप की नज़र ही सबसे ज़्यादा लगती है बच्चों को, तभी तो बेटू एक दिन भी ठीक नहीं रहता है।"

निश्चित समय पर दूध पिलाना, शीशी में दूध भरना, बाद में उसकी सफ़ाई करना आदि सब काम अम्मा के लिए बिलकुल नए थे। उन्होंने तो रामेश्वर को अपने ढंग से पाला था जब बच्चा रोया झट दूध पिला दिया। दूध के लिए भी समय देखना पड़ता है, यह बात उनके लिए एकदम नई थी। दो साल तक तो उन्होंने रामेश्वर को अपना दूध पिलाया था, उसके बाद गिलास से पिलाती थीं। यह शीशी का नख़रा उस ज़माने में था ही नहीं, और होगा भी तो शहरों में। पर रमा से बड़ी लगन और तत्परता से एक जिज्ञासु विद्यार्थी की तरह उन्होंने यह सब भी सीखा। पति से ज़िद करके औषधालय की दीवार-घड़ी, जो पिछले बीस वर्षों से वहीं लगी थीं, उतरवाकर घर में लगवाई, और घड़ी देखना सीखा। उनके एकाकी जीवन में समय का कोई महत्त्व

ही नहीं था। न पति को दफ़्तर जाना रहता था, न बच्चों को स्कूल, जो समय पर कोई काम करना पड़े। पर अब एकाएक ही उन्हें घड़ी की आवश्यकता महसूस होने लगी थी। यों उनकी याददाश्त बड़ी कमज़ोर थी, पर दूध के समय उन्होंने जो याद किए तो कभी नहीं भूलीं। शुरू-शुरू में यह सब उन्हें बड़ा अटपटा-सा लगा, पर फिर भी वे सारा काम बड़ी सतर्कता से करतीं। शीशी में दूध भरते समय उनका बूढ़ा हाथ अक्सर काँप जाया करता था, और दूध बाहर को गिर जाता था। उस समय वे एक असफल विद्यार्थी की तरह सफ़ाई पेश करती थीं, ''बहुत जल्दी सीख लूँगी बहू। ज़रा-सा हाथ काँप गया था, फिर शीशी का मुँह भी तो कितना छोटा है।'' उनका कहने का भाव ऐसा होता मानो वे कह रही हों कि इस छोटी-सी ग़लती के कारण ही कहीं तुम बेटू को ले मत जाना!

बीस दिन के बाद जब बहू ने अपनी माँ के घर प्रयाण किया तो बेटू ने न ज़िद की, न वह रोया ही। माँ के कड़े नियंत्रण के बाद दादी के असीम दुलार में रहना, जहाँ कोई बन्धन नहीं, अंकुश नहीं, बेटू को बड़ा अच्छा लगा। बहू चली गई, अम्मा ने निश्चिंतता की एक साँस ली। महीना बीतते-न-बीतते खबर आयी कि बहू के दूसरा लड़का हुआ है। अम्मा की छाती पर से जैसे एक भारी बोझ हट गया। संशय का एक काँटा जो रमा के जाने के बाद भी उनके मन में चुभा करता था, वह भी निकल गया। बेटू अब मेरा है, पूरी तरह मेरा है, यह भावना उसी दिन पूरी तरह उनके मन में जम पाई।

जाने से पहले रामेश्वर ने अम्मा और पिताजी के लिए ढ़ेर-सारे कपड़े बनवाए थे। अम्मा सारे मोहल्ले की औरतों को दिखाती फिरती। जो कोई आता उसी से कहतीं, ''अम्मा के पीछे तो बस रामेसुर पागल है, न आगे की सोचता है, न पीछे की। उसका बस चले तो मुझ पर ही सारा घर लुटा दे। लाख मना करती रही, पर एक बात नहीं मानी। अब बुढ़ापे में ये छपी साड़ियाँ पहनकर कहाँ जाऊँगी, पर वह क्यों सुनने लगा?'' उनकी झुर्रियों-भरे चेहरे पर चमक आ जाती, और वे आँखें मूँदकर अपने बेटे के चिरायु होने की कामना करतीं। जब रामेश्वर के जाने का समय आया तो उन्होंने रो-रोकर घर भर दिया। हिचकियाँ लेते हुए बोलीं, ''देख रामेसुर, यह तीन-तीन बरस तक घर का मुँह न देखने वाली बात अब नहीं चलेगी। साल में एक बार तो आ ही जाया कर मेरे लाल! नौकरी की जगह नौकरी है, और माँ-बाप की जगह माँ-बाप! मेरी तबीयत भी ठीक नहीं रहती, किसी दिन भी आँख मुँदी रह जायेगी, तो मैं तेरी सूरत को भी तरस जाऊँगी। सो कम-से कम अपनी इस बुढ़िया माँ को...'' पर आगे वे कुछ नहीं कह सकीं, बस फूट-फूट कर रोने लगीं। आँसू भरी आँखों से वे रामेश्वर के ताँगे को तब तक देखती रहीं, जब तक वह आँखों से ओझल नहीं हो गया। उसके बाद उन्होंने कसकर बेटू को अपनी छाती से चिपका लिया।

दूसरे साल रामेश्वर नहीं आया, केवल रमा आई, शायद बेटू को देखने। पर बेटू को जो देखा तो उसका माथा ठनक गया। जिस बेटू को वह छोड़ गई थी, और जिसे अब वह देख रही रहै, दोनों में कोई सामंजस्य ही नहीं था। बात-बात में उसकी ज़िद देखकर रमा का ख़ून खौला जाता। खाना वह दादी अम्मा के हाथ से खाता, और सारे दिन चरता रहता था। रात में सोता तो दादी अम्मा के दोनों अंगूठे पकड़कर सोता, और जब तक दादी अम्मा उसे लोरी नहीं सुनातीं तब तक उसे नींद नहीं आती थी। सारे दिन दादी अम्मा की धोती का पल्ला पकड़कर उनके पीछे-पीछे घूमा करता, और शाम को गली-मुहल्ले के गंदे-गंदे बच्चे के बीच खेलता। उसे देखकर कौन कहेगा कि यह एक पढ़ी-लिखी सभ्य लड़की का बच्चा है। घर के सामने से जो कोई भी फेरीवाला निकल जाता, उसी से बेटू कुछ-न-कुछ ज़रूर ख़रीदता, न दिलवाने से ज़मीन-आसमान एक कर देता, और मचल-मचलकर सारे आँगन में लोटता।

आखिर रमा को ज़बान खोलनी ही पड़ी, "अम्मा, आपने तो इसे बिगाड़कर धूल कर रखा है, इस तरह कैसे चलेगा?"

दादी माँ ने हँसते हुए बड़े सहज भाव से कहा, "अरे, बचपन में कौन ज़िद नहीं करता बहू! रामेसुर भी ऐसे ही करता था, यह तो सच हूबहू उसी पर पड़ा है। समय आने पर सब अपने-आप छूट जाएगा। यही तो उमर होती है ज़िद करने की, साल-दो-साल और कर ले फिर अपने-आप सब कुछ छूट जाएगा!" और वे मुग्ध भाव से गोद में बैठे बेटू के बालों में अंगुलियाँ चलाने लगीं। रमा ख़ून का घूँट पीकर रह गई। रमा की इच्छा हुई बेटू को अपने साथ लेती जाए, पर एक साल का पप्पू ही उसे इतना परेशान करता था कि दोनों को साथ रखने का साहस नहीं हुआ। बम्बई जाते ही उसने अम्मा के पास ज़रा खरी-खरी भाषा में पत्र पहुँचाने आरंभ कर दिए। जैसे ही वह चार साल का हुआ, रमा ने लिख दिया कि अम्मा अब उसे यहाँ के नर्सरी स्कूल में भर्ती करवा दें, कम-से-कम कुछ तमीज़ तो सीखेगा! चिट्ठियाँ पढ़ती तो अम्मा को लगता बहू का दिमाग़ बौरा गया है। भला चार साल का दूध पीता बच्चा कहीं स्कूल जा सकता है! रमा के पत्र आते रहे और अम्मा का ढर्रा अपने ढंग से बराबर चलता रहा।

दो साल बाद फिर रमा और रामेश्वर अपने तीन साल के पप्पू को लेकर आए। पप्पू ने अंग्रेज़ी की छोटी-छोटी कविताएँ याद कर रखी थीं और बड़े अदब के साथ बोलता था। अभी दो महीने पहले ही रमा ने उसे वहाँ के अंग्रेज़ी स्कूल में भर्ती करवाया था। पर बेटू वैसा ही था जैसा रमा उसे छोड़ गई थी। उम्र में वह ज़रूर बड़ा हो गया था बाकी सब-कुछ वैसा ही था। रमा उठते-बैठते रामेश्वर से कहती,"जैसे भी हो, इस बार बेटू को लेकर चलना ही होगा। यही हाल रहा तो इसकी ज़िन्दगी चौपट हो जाएगी। यह भी कोई ढंग है भला!"

"अम्मा को बड़ा दुख होगा, और बेटू तुम्हारे पास ज़रा भी तो नहीं आता, वह अम्मा को छोड़कर कैसे रहेगा? ये सारी बातें सोच लो!" रामेश्वर इस प्रसंग को जैसे टालना चाहते थे।

"अम्मा के दुख की बात मैं मानती हूँ।" रमा ने अपने आवेश को दबाते हुए कहा, " पर अब उन्हें लिखा कि स्कूल में डाल दो तो वह भी तो उनसे नहीं हुआ। जैसे बताती हूँ वैसे तो रखती नहीं। अब इनके दो दिन के सुख के लिए बच्चे का सारा भविष्य बिगाड़ कर रख दूँ?" उसका गला भर्रा आया था।

रामेश्वर बेचारा बड़े धर्म-संकट में था। उसे पत्नी की बातों में भी सार नज़र आता था, और वह अम्मा की भावनाओं को भी ठेस नहीं पहुँचाना चाहता था, सो बिना कुछ निर्णय दिए सारी बात रमा पर छोड़ कर वह बम्बई लौट गया। रमा कभी मिठाई दिलाकर, कभी ताँगे में घुमाकर बेटू को अपने से हिलाने की कोशिश करने लगी। बेटू को ताँगे में घूमने का बेहद शौक था, जो कम ही पूरा होता था। अम्मा को भी स्वप्न में भी ख़्याल नहीं था कि रमा पप्पू के रहते हुए भी बेटू को ले जाने का प्रस्ताव रखेगी। जिस दिन उन्होंने सुना, उनके पैरों-तले की ज़मीन सरक गई। जब रमा ने बेटू को उनके पास छोड़ने का प्रस्ताव रखा था, तब एकाएक उन्हें अपने कानों पर भी विश्वास नहीं हो रहा था। ठीक उसी प्रकार ले जाने की बात पर भी उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था। फिर भी काँपते स्वर में कहा,"कैसी बात करती हो बहू। मेरे बिना वह पल-भर भी तो नहीं रहता। इतना बड़ा हो गया, फिर भी जब तक में कौर नहीं देती तब तक वह खाता नहीं, तो एकाएक मुझसे दूर कैसे रहेगा?"

"नहीं रहेगा तो थोड़े दिन रो लेगा, आख़िर उसकी पढ़ाई का सिलसिला भी तो ज़माना है अम्मा! देखो, पप्पू स्कूल जाने लगा है और यह भी तुमहारा पल्ला पकड़े-पकड़े ही घूमता है।"

" अरे पढ़ लेगा बहू, पढ़ लेगा! उमर आएगी तो पढ़ लेगा। यह मत सोचना कि मैं उसे गंवार ही रहने दूँगी। रामेसुर को भी तो मैंने ही पाला-पोसा है, उसे क्या गंवार रख दिया? फिर यह तो मुझे और भी प्यारा है। मूल से ब्याज ज़्यादा प्यारा होता है, इसे तो मैं खूब पढ़ाऊँगी, तू चिंता मत कर बहू, पर इसे ले जाने की बात मत कर... " और वे फफफ-फफककर रो पड़ीं।

रमा की आँखों में भी आँसू तो आ गए, फिर भी उसने अपने पर काबू पाते हुए, और स्वर को भरसक कोमल बना कर कहा, " मैं आपका दिल नहीं दुखाना चाहती अम्मा, पर आपके इस ज़रूरत से ज़्यादा प्यार ने ही तो इसे बिगाड़कर धूल कर दिया है। एक भी आदत तो इसमें अच्छी नहीं है। यदि आप सचमुच ही इसे प्यार करती हैं और इसका भला चाहती हैं तो इसे मेरे साथ भेज दीजिए, और उसके साथ दुश्मनी ही निभानी है तो रखिए इसे अपने पास।" कहने के बाद ही रमा को लगा, जैसे बहुत बड़ी बात कह गई है।

" मैं...मैं अपने बेटू के सात दुश्मनी निभाऊँगी-मैं उसकी दुश्मन हूँ...मैं...तू मेरे प्यार की परीक्षा लेना चाहती है, पर ऐसी कठिन परीक्षा तो मत ले बहू, इससे तो तू मेरे प्राण ही ले ले!" और वे फूट-फूटकर रोने लगीं। कुछ देर बाद एकाएक स्वर संयत करके बोलीं,"ले जा बहू ले जा। मेरा बेटू फूले-फले, पढ़-लिखकर लायक बने इससे बढ़कर खुशी की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है। मेरा क्या है, मेंरा क्या चार दिन की हँसी-खुशी के लिए मैं तेरे बच्चे की ज़िन्दगी नहीं बिगाड़ूँगी। मैं अपढ़-गंवार औरत ठहरी, इसे लायक कहाँ से बनाऊँगी! तू इसे ले जा। चार दिन को मेरी ज़िन्दगी में हंसी-खुशी आ गई, इसी में तेरा बड़ा जस मानूँगी. " और रमा कुछ कहे उससे पहले ही उन्होंने रसोईघर में जाकर भीतर से किवाड़ बन्द कर लिए।

रमा को खुद इस सारी बात से बड़ा दु:ख हो रहा था, पर बच्चे की बात सोच कर वह निर्णय बदलने में अपने को असमर्थ पा रही थी। यही सोच-सोचकर वह अपने को तसल्ली दे रही थी कि समय का मरहम अम्मा के घाव को अपने-आप भर देगा।

दो दिन बाद औषधालय के एकमात्र नौकर और दोनों बच्चों को लेकर रमा अपनी माँ के यहाँ चल पड़ी। बेटू को बताया ही नहीं गया कि रमा उसे अपने साथ ले जा रही है। रोज़ की भाँति ताँगे में घूमने के लालच में वह चला गया। जाते समय कह गया,"दादी-अम्मा, मैं तुम्हारे लिए मिठाई और गोली लेकर आऊँगा" दादी-अम्मा ने उसे कलेजे से लगा लिया। एक बार उनकी इच्छा हुई कि वह बेटू को बता दे कि रमा उसे हमेशा के लिए उनसे अलग करके ले जा रही है, पर फिर भी वे चुप रहीं।

उसके बाद जो भी कोई घर में आया, अपार आश्चर्य से उसने पूछा, "अरे, बहू बेटू को ले गई? तुम तो कहती थी कि बेटू अब तुम्हारे पास ही रहेगा।" अम्मा को लगा, जैसे किसी ने उनके कलेजे पर गरम सलाख़ दाग़ दी हो। तिलमिलाकर जवाब देतीं, "कहती तो थी पर अब रखा नहीं जाता। गठिया के मारे मेरा तो उठना-बैठना तक हराम हो रहा है, तो मैंने ही कह दिया कि बहू, अब पप्पू बड़ा हुआ सो बेटू को भी ले जाओ।"

"अरे अम्मा, एक पल तो तुम उसे छोड़ती नहीं थीं, अब रह लोगी उसके बिना?"

"नहीं रह सकती तो भेजती क्यों? अब यह कोई बच्चे पालने की उमर है भला! जिसकी थाती उसी को सौंपी। बुढ़ापा है, कुछ भजन-पूजन ही कर लूँ। उनके मारे मेरा सब-कुछ छूट गया था!" बड़े ही संदिग्ध भाव से अम्मा की इस दलील को औरतें स्वीकार कर पाती थीं। आज अम्मा के पास कोई काम नहीं था करने को सो, ख़ाली आँगन में दर्दीला स्वर से एक लोरी गुनगुना रही थीं। साम को गुब्बारे वाला आया, बुढ़यि के बाल वाला आया, खिलौने की मिठाई बेचने वाला आया तो मुरझाये स्वर में अम्मा ने सबको यही जवाब दिया,"जाओ, भाई जाओ! आज तुम्हारा ग्राहक नहीं है। उसे मैंने उसकी अम्मा के साथ भेज दिया। अब यहाँ मत आया करो, कभी मत आया करो, कोई तुम्हारी चीज़ नहीं ख़रीदेगा!" और उनका मन सुबक उठता, पर उनकी आँखों के आँसू जैसे सूक गए थे!

तीसरे दिन औषधालय का नौकर वापस आया, तो सबसे पहले ख़बर दी कि दादी-अम्मा को याद करते-करते बेटू को बुखार आ गया और वह उसे भरे बुख़ार में छोड़कर आया है। वह रमा के हाथ से न कुछ खाता है न दवाई पीता है। अम्मा ने सुना तो ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह गई। पागलों की भाँति दौड़ती हुई औषधालय में पहुँची, "अरे सुनते हो, बेटू रो-रोकर बीमार हो गया है। मैं तो पहले ही जानती थी कि वह मेरे बिना रहेगा नहीं, पर बहू को कौन समझाए! अब तो रात की गाड़ी से ही जाकर मुझे उसे लाना होगा! वह तो रो-रोकर प्राण दे देगा। हे भगवान, मेरी मत पर भी पत्थर पड़ गए थे जो बहू की बात मान गई?"

अम्मा रोती थीं और कपड़े ठीक करती जाती थीं। नर्बदा आई तो आश्चर्य से बोली,"कहाँ की तैयारी कर रही हो अम्मा?"

"अरे, सिब्बू बहू को छोड़कर लौटा तो बताया कि बेटू ने रो-रोकर बुख़ार चढ़ा लिया। मैं तो भेजकर अपनी तरफ़ से निश्चिन्त हो गई थी, पर वह रह सकता है क्या? उसके तो प्राण मुझमें कुछ ऐसे पड़ गए थे कि क्या बताऊँ। कोई अगले जन्म का संस्कार ही समझो! अब जाकर लाना पड़ेगा, नहीं तो छोरा रो-रोकर प्राण दे देगा।" और गर्व और आनंद से उनकी छाती फूल गई।

तीसरे दिन ही बेटू को लेकर वे लौट आईं। जिसने देखा उसी ने कहा,"अरे, चार दिन में ही बच्चा सूख गया।"

"सूखेगा नहीं, कुछ तो खाया नहीं, और एक पल को आँसू नहीं टूटा। मैं तो सोचती थी कि बहू के हवाले करके सुख से पूजा-पाठ करूँगी, पर अब यह रहता भी तो नहीं।"

एक साल उन्होंने इसी प्रकार और निकाल दिया। रमा बम्बई से आई और फिर बेटू का वही रवैया देखा तो सोचा कि वह उसे सीधे बम्बई ले जाती तो यह सारा कांड नहीं होता। अम्मा बम्बई तक आ नहीं सकती थी। सो इस बार फिर एकबार दादी माँ को रुलाकर उनके मना करने पर भी वह बेटू को लेकर बम्बई के लिए चल पड़ी। जाने किस आशा से अम्मा ने अपनी सारी जमा-पूँजी ख़र्च करके शिब्बू को साथ कर दिया। रमा मना करती रही कि अब दोनों बच्चे बड़े हैं और वह संभाल लेगी, पर अम्मा ने शिब्बू को साथ भेज ही दिया

दूसरे दिन से जो कोई भी आता, अम्मा उसी के सामने यह मनौती मनातीं कि किसी प्रकार बेटू रमा के पास हिल जाए तो वह सवा रुपये का परसाद चढ़ाएँगी। उच्च स्वर से वह रात-दिन रट लगाए रहतीं कि बेटू मुझे किसी करह भूल जाए। पर सात दिनों के बाद जब सिब्बू लौट कर आया तो वे ऐसे दौड़ पड़ीं मानो वह बेटू को लेकर ही आया हो। झपटकर उन्होंने पूछा, "मेरा बेटू कहाँ है? मेरा बेटू ठीक है शिब्बू, तुझे मैंने किसलिए भेजा था।" उनका स्वर बुरी तरह काँप रहा था।

"इस बार तो अम्मा, बहूजी ने बेटे को हिला दिया। वहाँ बहूजी के मकान में बहुत सारे बच्चे हैं, उन सबसे दोस्ती हो गई, सो ख़ूब खेलता है। ट्राम, बस, बगीचे, झूले-इन सबमें उसका मन लग गया।" शिब्बू ने बताया तो अम्मा शून्य-पथराई आँखों से उसे देख रही थीं मानो कुछ समझ ही नहीं रही हों। शिब्बू कहे चला जा रहा था, "चलो, तुम्हारी चिन्ता दूर हुई। मैं तो अम्मा, दो दिन इसी मारे ज़्यादा रुक गया कि कहीं रोया तो अपने साथ लेता आऊँगा, पर इस बार बहूजी ने उसे समझा दिया और वह भी समझ गया। अब वहाँ जम जाएगा। अब तो तुम परसाद चढ़ाओ अम्मा, और मज़े से भजन-पूजा करो।"

एकाएक जैसे अम्मा की चेतना लौट आई, “क्या कहा...बेटू भूल गया ? वहाँ जम गया ? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई। इस बार भगवान ने मेरी सुन ली। ज़रूर परसाद चढ़ाऊँगी। मेरे बच्चे के जी का कलेस मिटा, मैं परसाद नहीं चढ़ाऊँगी भला ?” और फिर गीली आँखों और काँपते हाथों से, उन्होंने जेब से सवा रुपया निकालकर शिब्बू को देते हुए कहा, “ले, पेड़े लेता आ, अब परसादी चढ़ाकर बाँट ही दूँ। कौन, नर्बदा ? सुना नर्बदा, बेटू मुझे भूल गया-वह भूल ही गया...” और उन्होंने आंचल से भर-भर आती आँखें पोंछीं और हँस पड़ीं।

शब्दार्थ-टिप्पणी

पुलकित अत्यधिक प्रसन्न, प्रफुल्लित **औषधालय** आयुर्वेदिक अस्पताल **बड़भागी** सौभाग्य शालिनी **परिहास** हँसी, मजाक **तत्परता** शीघ्रता **जिज्ञासु** जानने का इच्छुक **सर्तकता** सावधानी **अंकुश** नियन्त्रण **भरसक** यथासंभव **संयत** संतुलित

मुहावरे

आँख डबडबा आना आँखों में आंसू आ जाना **खरी-कोटी सुनाना** भला बुरा कहना **नोन-राई करना** नजर उतारना **संशम का काँटा चुभना** शक होना **उठना बैठना हराम होना** काम करने में मुश्किल होना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) अम्मा की प्रसन्नता का क्या कारण था ?

(2) अम्मा की खुशी के बारे में जानकर नर्बदा ने क्या कहा ?

(3) अम्मा अपने आपसे व्यस्त क्यों रखना चाहती थी ?

(4) बहू ने क्या कहा जिस पर अम्मा को विश्वास नहीं हुआ ?

(5) अम्मा सभी को बेटू के अपने पास रुकने की खबर क्यों सुनाती थीं ?

(6) बेटू को देखकर बहू का माथा क्यों ठनका ?

(7) शिब्बू ने लौटकर अम्मा को क्या बताया ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) रामेसुर के आने के उत्साह में माँ की तैयारी का वर्णन कीजिए।

(2) बेटू को अपने पास रखने के लिए अम्मा ने क्या-क्या करना प्रारम्भ किया।

(3) रमा की चिंता का क्या कारण था ? उसने अम्मा से क्या कहा ?

(4) बम्बई में बेटू का मन लग गया, ये जानकर अम्मा की क्या प्रतिक्रिया हुई ?

(5) अम्मा की मन:स्थिति का चित्रण कीजिए।

3. संदर्भ व्याख्या लिखिए :

(1) क्या बात करता है रामेसुर, इसमें भी कोई वजन है जो उठाना पड़े, फूल जैसा तो हल्का है।

(2) संशय का एक काँटा जो रमा के जाने के बाद भी चुभा करता था, वह भी निकल गया।

योग्यता विस्तार

- घर के आसपास के किसी वृद्धाश्रम या किसी वृद्ध के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए।

•

9 बिस्तरा है न चारपाई है

त्रिलोचन शास्त्री
(जन्म : सन् 1917 ई; निधन : सन् 2007 ई.)

त्रिलोचन शास्त्री का जन्म सुल्तानपुर जिले के कटघरा चिरानी पट्टी गाँव में हुआ था। त्रिलोचन मूल नाम वासुदेवसिंह था, जिसे संस्कृत अध्यापक ने बदलकर त्रिलोचन कर दिया। आर्थिक अभावों के बीच उन्होंने फक्कड़ाना जीवन जीते हुए किताबों की दुनिया से अधिक दुनिया की किताब पढ़ी। प्रमुख प्रगतिवादी कवि के रूप में उनकी एक विशिष्ट पहचान बनी। ग्रामीण परिवेश के राग-विराग का उनकी कविता में सहज निरूपण हुआ है। पूँजीवादी समाज-व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश होने के कारण अभावग्रस्त जन-सामान्य के जुझारूपन और उसकी उत्कट जिजीविषा की उनकी कविता में ओजस्वी अभिव्यक्ति हुई है।

हिन्दी कविता में त्रिलोचन 'सोनेट' के पर्याय के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने गीत और गजलें भी लिखीं ।'धरती,' 'गुलाब' और 'बुलबुल,' 'दिगंत,' 'ताप के ताए हुए दिन' 'उस जनपद का कवि हूँ,' 'अरघान' तथा 'तुम्हें सौंपता हूँ ' प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं। पत्रकारिता एवं कोश-निर्माण में उनका महत्त्वपूर्ण प्रदान रहा ।'ताप के ताए हुए दिन' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा हिन्दी अकादमी, दिल्ली का शलाका सम्मान प्राप्त हुआ।

प्रस्तुत गजल में कवि ने दर-ब-दर की ठोकरें खाने को विवश आम आदमी की अभावग्रस्त जिंदगी का यथार्थ चित्र अंकित किया है। मरने के लिए घुट-घुट कर जी रहे आदमी के जीवन का संघर्ष सबसे बड़ी सच्चाई है। बिस्तरा और चारपाई का न होना सब कुछ स्वयं व्यंजित कर देता है।

बिस्तरा है न चारपाई है,
ज़िन्दगी खूब हमने पाई है।

कल अँधेरे में जिसने सर काटा,
नाम मत लो हमारा भाई है।

ठोकरें दर-ब-दर की थीं हम थे,
कम नहीं हमने मुँह की खाई है।

कब तलक तीर वे नहीं छूते,
अब इसी बात पर लड़ाई है।

आदमी जी रहा है मरने को
सबसे ऊपर यही सच्चाई है।

कच्चे ही हो अभी त्रिलोचन तुम
धुन कहाँ वह सँभल के आई है।

शब्दार्थ-टिप्पणी

दर-ब-दर द्वार-द्वार पर, हर जगह **तलक** तक **मुँह की खाना** मात खाना ,पराजय **तीर** बाण, किनारा

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवि ने किस तरह की ज़िन्दगी पाई है ?

(2) ग़जल में किस सच्चाई का उल्लेख किया गया है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) गजल का केन्द्रीय भाव स्पष्ट कीजिए।

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

'कल अँधेरे में जिसने सर काटा,
नाम मत लो हमारा भाई है।'

योग्यता-विस्तार

- इस भाव से संबंधित अन्य दो कविताएँ खोजिए और उनका अध्ययन कीजिए।

●

10 अदम्य जीवन

रांगेय राघव

(जन्म: सन् 1923 ई; निधन:न् 1962 ई.)

रांगेय राघव का जन्म राजस्थान के भरतपुर जिले के वैर के रियासती मंदिर सीताराम के तमिल महन्त स्वामी रंगाचार्य के घर हुआ था। मूल तमिलभाषी होकर भी राजस्थान के एक छोटे से कस्बे में रहकर उन्होंने आजीवन हिन्दी की सेवा की। सबसे पहले उनकी रचना कोलकात्ता से प्रकाशित 'विशाल भारत' में छपी थी।

साहित्य की प्राय: सभी विधाओं पर उन्होंने लिखा किंतु कथाकार के रूप में उनका प्रदान विशेष रहा। राहन रूकी, 'कब तक पुकारूँ', 'पक्षी और आकाश', 'घरौंदे' उनके मुख्य उपन्यास हैं। उनकी कहानी 'गदल' हिन्दी की प्रतिनिधि कहानियों में से एक मानी जाती है। रांगेय राघव एक अच्छे चित्रकार भी थे। राजस्थान साहित्य अकादमी, उत्तरप्रदेश सरकार एवं अन्य अनेक संस्थाओं ने उन्हें पुरस्कृत किया था।

'अदम्य जीवन' बंगाल के सन् 1942 के अकाल पर रांगेय राघव द्वारा लिखित यह रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' शृंखला का एक अंश है। इसमें उस भीषण अकाल की अमानवीय बना देने वाली दैवीय यातना तथा दुष्टतापूर्ण मानवीय अनीतियों के बावजूद बंगाल के लोगों की अदम्य जिजीविषा का मार्मिक आख्यान है। लेखक ने बंगाल के भीषण अकाल से ग्रस्त शिद्धिरगंज नामक गाँव में घटित विनाश लीला का सच्ची संवेदना के साथ कलात्मक चित्रण किया है। भुखमरी और बीमारियों की वजह से सारा गाँव उजड़ गया है। दूर-दूर तक सिर्फ कब्रें ही कब्रें दिखाई देती हैं, बीच-बीच में कुछ टूटे-फूटे घर बचे हैं, कुछ लोग बचे हैं, जिन्दा लाश की तरह। कुदरत की मार और जमाखोरों की क्रूरता के बावजूद जीवित रहने की अदम्य इच्छा है, मौत से जूझने का अदम्य साहस है। लेखक के विचार से जनशक्ति कभी मर नहीं सकती, मिट नहीं सकती। उसे कोई न मार सकता है, न मिटा सकता है। आँखों देखी घटनाओं का लेखक ने जो यथार्थ चित्र अंकित किया है, वह मन को झकझोर देता है।

हम पगडंडियों से बढ़ते जा रहे थे। सूर्य आकाश में चढ़ने लगा था। कहीं-कहीं कोई किसान किसी पेड़ की छाया में बैठा दीख पड़ता था। सर्वत्र नीरवता छा रही थी। आकाश में बादल तैर रहे थे, जिन्हें देखकर खेतों से एक सोंधी-सी उसांस उमंग उठती थी। दूर हरियाली लहर तेज चलती हवा की तरंगों पर गूँज-सी उठती थी। हरी-भरी पृथ्वी पर कभी-कभी बादलों के छा जाने से कहीं धूप और कहीं छाया, बरबस हृदय को अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी। किन्तु मेरे साथी को जैसे इन सब बातों में दिलचस्पी नहीं थी। बायाँ हाथ उठाकर वह कह रहा था--''वही है शिद्धिरगंज, देख रहे हो न वह ताड़ का पेड़?''

दूर--लगभग मील-भर की दूरी पर-कालनेमि की तरह खड़ा था वह लम्बा ताड़ का पेड़। जैसे-जैसे हम उस पेड़ की तरफ बढ़ रहे थे, आकाश के बादल लहरों की तरह उस पर केन्द्राकार आ-आकर फैल जाते थे। वर्षों से ताड़ का वह पेड़ इसी तरह खड़ा है और वर्षों से उसके हिलते पत्तों ने बादलों की मर्मर सुनी है; किन्तु आज उसकी छाया में मनुष्य विक्षुब्ध हैं।

मेरा साथी चुपचाप बढ़ा चला आ रहा था। एकाएक वह ठिठककर खड़ा हो गया। मैं उसके पीछे था। मैंने उसका कन्धा पकड़कर कहा-''भट्टाचार्यजी, क्या हुआ?''

''कुछ नहीं; गाँव आ गया।''

''गाँव! पर यहाँ तो कोई बस्ती शुरू ही नहीं हुई।''

साथी की आँखों में निराश मुस्कराहट काँप उठी--''नहीं क्यों कहते हैं आप? वह देखिए, वह...!'' और उसने अपना हाथ सामने की ओर उठा लिया। मिट्टी का एक छोटा-सा ढूह घास में से अपना अनगढ़ सिर निकाले चुपचाप पड़ा था। मैं समझ नहीं सका कि क्या यही गाँव है? मैंने कहा--''यह तो मिट्टी का एक ढूह-मात्र है।''

''इस गाँव की यही तारीफ है। आदमी मिलने से पहले यहाँ कब्रें शुरू हो जाती हैं!''

मैंने देखा, वह सचमुच कब्र थी। कच्ची मिट्टी, सिर पर कोई साया नहीं, चारों तरफ कोई घेरा नहीं। हम लोग बढ़ चले। प्रतीक्षा की-सी नीरवता में प्राय: हर पाँच-दस कदम पर एक-न-एक कब्र थी। मेरा हृदय काँप उठा।

सामने एक टूटा घर था- भग्न, विध्वस्त; मानो तूफान में उसका वैभव नष्ट हो गया था और उसके सामने पेड़ों की शीतल और मनोरम छाया में चौदह कब्रें आँखें मूँदे पड़ी थीं। एक लड़का, जो वहीं बैठा एक आम की गुटली का सब-कुछ खा जाने में लगा था, अपने-आप चिल्ला उठा-''बाबू, एक-एक में दो-दो, तीन-तीन हैं। एक-एक में दो-दो, तीन-तीन।''

और वह फिर गुठली को मुँह मारने लगा। भट्टाचार्यजी पेड़ों की घनी छाया में एक पेड़ से सटकर खड़े विश्राम कर रहे थे। वे कहने लगे–''बाहर से तुम्हारी तरह ही बहुत–से लोग आते हैं। हम चाहते हैं कि तुम यहाँ की एक–एक कब्र से बात करो और हिन्दुस्तान के कोने–कोने में जाकर कहो कि जिस ढाके की मलमल एक दिन शहंशाह पहनते थे, आज वहाँ जुलाहे चूहों की तरह मर रहे हैं। बोलो, सुना सकोगे संसार को यह ?''

छोटी–छोटी पगडंडियों से होता हुआ यह स्वर कब्रों से टकराकर गूँज उठा और मानो कब्रों से आवाजें आने लगीं। चौदह कब्रें –आँखों के सामने एकबारगी उनमें सोए कंकाल तड़प उठे और नाच उठे यातना से व्याकुल, भूख से तड़प–तड़पकर मरते हुए प्राणियों के चित्र।

राह में एक वृद्ध अपनी चटाई पर बैठा करघा चला रहा था। हम लोग उसी के पास जाकर रुक गए। वृद्ध ने हमारी ओर दृष्टि उठायी। भट्टाचार्य ने कहा–''दादा, आगरे से आये हैं यह, यहाँ का हाल देखने।''

'जियो बेटा जियो!' वृद्ध ने गद्‌गद स्वर से कहा–'यह आगरा कहाँ है ?'

'हिन्दुस्तान में ?'

''हिन्दुस्तान से आये हो ? आओ, बैठो बेटा, आओ।'' उसने चटाई की ओर इशारा किया। हम लोग बैठ गये। वृद्ध कहने लगा–''जो देखने लायक था, वह तो खत्म हो गया मगर तुम आए हो, तो देखो; आगे जाने क्या हो ?'' वह क्षण–भर चिन्तित–सा दिखायी दिया फिर भी एकाएक स्वर बदलकर उसने कहा––''तुम हमारे मेहमान हो, भैया! आराम से बैठो ज़रा। हम भूखे हैं; मगर तुमने जो इतना कष्ट किया है, किसलिए? हमें अपना समझकर ही न? फिर तुम समझते हो, हमें इसका ज्ञान नहीं है ?''

मैं चुप बैठा रहा। भट्टाचार्यजी कहने लगे–'दादा, कष्ट–वष्ट की बात छोड़ो; इन्हें इस गाँव के कुछ हालचाल बताओ।'

वृद्ध एक क्षण चुप रहा। फिर बोला– ''हालचाल? वह देखो....!'' और उसने एक कब्र की ओर इशारा किया और कहता गया–''शिद्धिरगंज के हालचाल सुनना चाहते हो? एक–दो–तीन, गाँव के एक छोर से दूसरे छोर तक गिनते चले जाओ। कसम है, अगर तुम किसी को हाय–हाय करते पाओ। नहीं, आज कुछ नहीं है। था एक दिन, जब गाँव में रात–दिन रोने–कराहने के सिवा और कुछ भी सुनायी नहीं देता था; मगर अब तो वह सब–कुछ नहीं।''

वास्तव में हमें कोई भी रोता नहीं दिखा। सब मानो अपने–अपने काम में लगे थे। मैंने देखा, डॉक्टर चुपचाप घरों की ओर देख रहा है। बाँस के सुन्दर–सुन्दर झोंपड़े! सदियों से बंगाल– हम लोगों–पर बार–बार बाहरी हमले होते रहे; मगर आक्रमणकारी कभी भी यहाँ की शस्य–श्यामला पवित्र भूमि को नहीं रौंद सके। यहाँ मनुष्य को इतना समय मिल चुका था वह बैठकर आराम से इतने सुन्दर और स्वच्छ घर बना सकता और आज वही घर निर्जनता की अर्गला लगाए मूक खड़े थे! अकाल ने उनपर अपनी जो वीभत्स छाया डाली थी, उसका धुंधलका अभी तक भी मानो कोनों में छिपा बैठा था।

मैं देख रहा था, जिनके शरीर में केवल हड्डियाँ ही शेष नहीं थीं आज भी उनमें जीवित रहने का साहस था। अकाल आया, बीमारी आयी और फिर दूसरे अकाल की गहरी आँधी भी क्षितिज पर सिर उठाने लगी है; किन्तु अविचलित हैं यह! किसलिए? इसीलिए न कि यह जनता किसी से भी दब नहीं सकती! एक दिन विजेताओं ने इन्हें कुचला था, आज भी मनुष्य का स्वार्थ और भीषण व्यापार इन्हें निचोड़ रहा है; किन्तु यह तो अभी अदम्य, अविजय हैं!

बूढ़ा फिर कहने लगा। अबके उसका स्वर दृढ़ था–''इस गाँव में आज घरों पर किसकी दृष्टि ठहरेगी, भैया? इधर देखो, वे जो छाया में सो रही हैं चुपचाप, वे मिट्टी की कच्ची कब्रें, गिनकर देख लो, अगर पाँच सौ से कम दिखायी पड़ें! और एक–एक में एक ही आदमी दफनाया गया हो, यह भी कोई जरूरी बात नहीं है। यह है हम मुसलमानों की बात और अगर तुम सुनना चाहते हो कि हिन्दू क्यों नहीं मरे, तो जाकर शीतलक्खा की धारा से पूछो कि क्यों शिद्धिरगंज के सैंकड़ों किसानों को बहा ले गयी, जिनकी हड्डियों तक का आज पता नहीं?''

और वह सहसा मुस्करा उठा। मैंने देखा और समझने की चेष्टा की। मृत्यु ने उसे विक्षुब्ध कर दिया था। उसने कहा–''इस गाँव में करीब हर घर में मौत हो चुकी है। हज़ारों व्यक्ति मर चुके हैं; मगर सब तो नहीं मर सकते थे, और शायद सब नहीं मरेंगे; मगर कौन जाने, आगे क्या होगा?''

इस समय कुछ और लोग भी वहाँ इकट्ठे हो गये थे। रहमत, जो अपने ताने को एक दफा ठोककर उठ आया था, आकर वहीं बैठ गया था। चर्चा चल पड़ी। रहमत कहने लगा–''हाँ, काफी लोग मर गये हैं।''

''तुम्हारे घर में कितने आदमी थे?''

''पच्चीस थे, जिनमें बीस मर गए। अब पाँच बाकी हैं।'' और उसने अब्दुल के हाथ से हुक्का लेकर धुआँ उगलना शुरू कर दिया। बोला-''यह मिल जाती है, भैया बस!'' उसने तम्बाकू की ओर इशारा किया। और मुस्करा उठा। पहले वृद्ध की वह क्षुब्ध आकृति अब कुछ दीन-सी हो गयी थी-मानो पहले जो व्यक्तिगत दु:ख सजीव होकर चारों ओर हाहाकार कर उठा था, अब सामूहिक रूप में केवल साधारण-सा होकर चक्कर काटने लगा है। कुछ देर बाद रहमत ने एक लम्बी सांस छोड़ी और फिर गम्भीर भाव से कहा:'आने दो, जो-कुछ आएगा, उसे झेलेंगे।''

पगडंडी पर मरियल भुखमरे कुत्ते भूँक उठे, मानो रहमत की बात को समझकर उन्होंने उसका समर्थन किया हो। रहमत ने फिर कहा-" उन दिनों तीस-चालीस आदमी रोज़ मरते थे। अकाल तो खत्म हो गया; मगर बीमारियों ने जो पकड़ा, तो उनसे अभी तक गला नहीं छूटा।''

डॉक्टर ने पूछा-''क्या-क्या बीमारियाँ हैं यहाँ?''

रहमत बिना सोचे ही रटी हुई-सी बात बतला गया-''मलेरिया, बसन्त (चेचक)और चर्म रोग।''

मैंने चारों ओर दृष्टि उठाकर देखा। लोगों के गालों की हड्डियाँ उभर आई थीं, आँखों में सूजी-सी ललाई छा रही थी, किसी-किसी के गले में सूजन थी। उन्हें लक्ष्य कर डॉक्टर ने मुझसे कहा-''करीब-करीब सभी या तो मलेरिया के शिकार रह चुके हैं या अब भी मलेरिया-ग्रस्त हैं।''

एक चंचल लड़का कहने लगा-''आपको अकाल की बात कुछ नहीं मालूम। यहाँ चावल किसी भी दाम पर नहीं मिलता था। तीन-साढ़े-तीन सौ आदमी तो इस गाँव को छोड़ गए। भुखमरे नहीं तो...!'' और उसकी झंकारती हँसी एकबारगी ठिठुराती-सी फैल गयी। उसकी बगल में एक लड़की खड़ी ती, कोई नौ-दस बरस की। यह बीच में ही बोल उठी-''भूल गया न कि अभी भी कई भुखमरे हैं, जो यहाँ लंगरखाने में खा रहे हैं।''

सहसा रहमत ने कहा-''अब्दुर्रहमान, आओ, इधर बैठो।''

अब्दुर्रहमान आया ही था कि एक आदमी कह उठा-''इसके घर में सोलह आदमी थे, जिनमें से यह अकेला बचा है।'' अब्दुर्रहमान ने निराश नयनों से हमारी ओर देखकर कहा-''क्या बताऊँ बाबू, अफसोस सिर्फ यह है कि अब घर भी नहीं रहा। रहमत के यहाँ पड़ा रहकर इन्हें दु:ख देता हूँ। ''

रहमत हँस पड़ा-''क्या बात कहते हो, अब्दुर्रहमान? तुम तो एक आये हो; मगर और जो उन्नीस की जगह बाकी है...।'' और सब हँस पड़े! इतने में सामने से घूँघट काढ़े एक स्त्री निकली। हठात् पूछ बैठा-''रहमत, क्या तुम्हारे गाँव में स्त्रियों को अपनी इज्जत बेचने पर भी उतारू होना पड़ा था?''

रहमत के मुँह पर एक काली छाया फैल उठी। उसने पल-भर कुछ नहीं कहा। फिर गम्भीर स्वर में कुछ सोचकर बोला-''बाबू, बात तो बुरी है; मगर है सच। कुछ थी ऐसी ; मगर बुरा कहकर भी कितनी बुरी थीं वे, मैं नहीं जानता। कुछ कहते हैं कि जैसे इतने मरे, वे भी मर जाती, तो हर्ज ही क्या था? पर मैं सोचता हूँ, मर जाना क्या सहज है? कोई क्या अपने आप मर जाना चाहता है? खैर, जाने दीजिए, इस बात को जाने ही दीजिए।''

अब्दुर्रहमान हर बार कह उठता था-''क्या करेंगे हम?क्या, बताइए न?'' उसके स्वर में अथाह निराशा और विवशता गूँज उटती थी। ''चावल का भाव अब भी 18 या 19 रुपये मन है। कहाँ से खरीदें हम? गाँव में अधिकांश अब भी एक वक्त ही खाते हैं और चावल खरीदने वाले भी सब ही तो चावल नहीं खाते, कई तो शकरकन्द के सहारे ही जी रहे हैं।''

''इतनी आमदनी नहीं, फिर बताओ,'' रहमत कहने लगा "कोई कैसे खरीदे? अकाल खत्म हुआ ही कब, जो दूसरा शुरू होगा? हमने कच्ची कब्रों में कई लाशों को बिना कफन के गाड़ दिया। आपको शायद मालूम न हो, हम मुसलमानों के यहाँ लाश को कफन में बाँधकर गाड़ने का कायदा है। मगर कायदा क्या करे, जब जिन्दों के लिए भी कपड़ा नहीं है, तो मरों की क्या कीमत है बाबू?"

उसका यह प्रश्न उसका अपना नहीं था। उसने अनजाने नहीं, जानबूझकर ही अँगुली उठायी थी उधर, जिधर मनुष्य को नंगा रखकर मनुष्य अपने मुनाफों के लिए बेशुमार कपड़ा तालों में बन्द कर रखा था, जहाँ वस्तु मनुष्य के लिए न होकर पैसे के लिए थी। कितना बड़ा व्यंग्य और विद्रूप था यह कि आज कपड़ा बनानेवाले स्वयं नंगे थे!

हम लोग काफी देर बैठ चुके थे। एक लड़का कह उठा,''चलिए बाबू, गाँव देखिए।'' और हम लोग उठे। वहाँ एकत्र हुए लोगों में से कुछ ने हमें प्रणाम किया, कुछ ने आशीर्वाद दिया और हम लोग चल दिये।

कहीं-कहीं कब्रें टूट गयी थीं। सामने के दो घर बिलकुल टूट गये ते, उनके केवल चबूतरे बाकी थे। सामने एक गाय घास चर रही थी। पेड़ों की छाया में अनेक कब्रें सोयी पड़ी थीं। लड़के ने कहा,''यह है आदू मियाँ का घर। मर गया बेचारा! उसके घर में उन्नीस आदमी थे, अब कोई भी नहीं बचा है।'' वायु सनसनाती हुई बह गयी। आदू मियाँ वहाँ बैठकर हँसता था, आज उसका कोई पता नहीं। लड़के को घर का एक-एक प्राणी याद था-अभी कल ही की तो बात थी। मगर निर्विकार खड़ा था। मानवी भावनाएँ कितनी कठोर हो गयी थीं! सहसा आगे चलकर वह एक कब्र पर खड़ा होकर कहने लगा,"बाबू, यह मेरे बाप की कब्र है। बस, मैं इतनी कब्रों में से इसे पहचानता हूँ। वह मुझे बहुत प्यार करता था। सचमुच वह मेरे ही लिए मर गया।" लड़का कुछ ठिठुर गया। मैंने देखा, डॉक्टर चौंक उठा। वह मुझसे बोला, "यह मुसलमान होकर कब्र पर खड़ा है? हमारे यहाँ तो ऐसे नहीं होता।"

भट्टाचार्यजी मुस्करा उठे। उन्होंने लड़के से वही प्रश्न दुहरा दिया। लड़का क्षण-भर चुप रहा। फिर हँस पड़ा- "यहाँ तो सब ऐसा ही करते हैं, बाबू ! कहीं पैर रखने की भी तो जगह नहीं है। कहाँ तक कोई कब्रों को बचता हुआ, उनका चक्कर देकर चले? इतनी ताकत है कितनों में।"

हम लोग आगे बढ़े। भट्टाचार्यजी एक आदमी से कुछ बातें करने लगे। वह आदमी कह उठा, "गाँव-कमेटी के, यूनियन-बोर्ड के मेम्बर सब चोर हैं,चोर! कोई हमारी परवाह करता है? रिश्तेदारों को कारड देते हैं, अपनों को देते हैं; हमारी क्या पूछ... ?" दूसरा आदमी चलते-चलते रुककर कह उठा, "हममें एका नहीं है, वर्ना क्या मजाल कि वह अपनी मनमानी करें!"

तब तो बंगाल अभी जीवित है! आज भी वह अपना रास्ता खोज निकालना जानता और चाहता है। भूख से व्याकुल होकर भी यह भारत का संस्कृति-जनक सिर झुकाने को तैयार नहीं है। आज भी वह इन आँधी-तूफानों को झेलकर फिर से विराट् रूप में फूट निकलना चाहता है। सचमुच कोई इनका कुछ नहीं कर सकता। यदि जनता में चेतना है, तो इन्हें भूखों मारने वाले नर-पिशाच नाज-चोरों का अन्त दूर नहीं है।

एकाएक लड़का एक झोंपड़े के पास पहुँचकर रुक गया। हमने देखा, भीतर कुछ जुलाहे साड़ियाँ बुन रहे थे। लड़के ने कहा,"ढाके की साड़ियाँ प्रसिद्ध हैं न बाबू! अब यही दो-चार घर रह गये हैं, और कुछ दिन बाद शायद..!" वह कहते-कहते चुप हो गया। जुलाहे काम छोड़कर हमारी ओर देख रहे थे। सामने ही एक औरत बैठी थी वह विधवा थी। उसके घर के दस आदमी मर चुके थे- और सामने केवल अनगढ़ कब्रें थीं।

अधिकांश घरों की टीनें उखड़ गई थीं और न जाने कितनों ने भूख से लड़ने के लिए अपनी टीनें बेच दी थीं। भट्टाचार्यजी ने अँगुली से दिखाते हुए कहा, ''सामने एक भद्रलोक का घर था। उसे भी टीन बेच देनी पड़ी, क्योंकि।'' सहसा वे रुक गये। बात पलटकर उन्होंने कहा, ''वे जो टीनें दिखाई दे रही हैं उखड़ी-उखड़ी. इसकी वजह यह नहीं कि उसके मालिक उन्हें बेचना नहीं चाहते थे ; मगर इसलिए कि उनमें इतनी ताकत ही नहीं रही थी कि उठाकर इन्हें बाजार तक ले भी जाते और यही कारण है कि !''

मैंने देखा, घर के चबूतरे के बीचोंबीच एक कब्र थी। यह भी एक मनुष्य था, जो अपने घर का वक्षस्थल फाड़कर सो रहा था। फोड़ों की तरह वे कब्रें जगह-जगह सूजी हुई-सी दिखायी दे रही थीं।

धूप तेज़ हो चली थी। हम हाट में पहुँच गये थे। मछलियों की बू वातावरण को भेद रही थी। एक बूढ़ा व्याकुल-सा भागा जा रहा था। भट्टाचार्यजी ने बताया, ''उसे उस समय तीव्र ज्वर था, जिसके कारण उसका दिमाग ठीक नहीं था।'' हाट के एक कोने में स्थानीय डॉक्टर की एक डिस्पेंसरी थी, छोटी-सी, गमगीन-सी। डॉक्टर के दिल में यह मुफ्त दवाखाने खोलेजाने की बात जमती नहीं थी। आखिर वह फिर क्या खाएगा। हमारे डॉक्टर ने उससे बातचीत की। उसके पास न कुनैन थी, न सिन्कोना; और गाँव में हर घर में मलेरिया का रोगी था, बच्चे की तिल्ली और जिगर बढ़े हुए थे।

दवाखाने के एक बेंच पर बैठा एक आदमी कह रहा था-"हर एक चीज़ चोर-बाजार में है, हर एक चीज पर मुनापाखोरी हो रही है; कोई करे तो क्या करे?"

एक औरत, जो पास में खड़ी थी, कहने लगी, "तुम डॉक्टर हो? पहले क्यों नहीं आये? जाने कितनी जानें बच जातीं! यहाँ एक सरकारी दवाखाना है जिसमें कोई खास दवाई नहीं, मरीजों की कोई खास तवज्जह नहीं। कहाँ, ढाकेस्वरी मिल नं. 2 में तुम्हारा दवाखाना है? अब वहीं आएँगे कल से; चार-पाँच मिल तो हैं ही...।"

उस समय उस औरत की बात की अनुसूची करके खैराती अस्पताल का एसिस्टेंट डॉक्टर मुझसे कह रहा था-"हमने 75 फीसदी आदमियों की हालत सुधार दी है....।" भट्टाचार्यजी मुस्करा रहे थे। एक ओर हमारे शासक बोल रहे थे, दूसरी ओर वही बात जनता कर रही थी। सामने अनेक जर्जर रोगी खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे- बुझी हुई आँखें, उभरी हुई पसलियाँ और वही भयानक चर्म रोग!

यहाँ से हम लंगरखानों की ओर चल दिये। लंगरखाने और जगह बन्द हो गये हैं, किन्तु यहाँ अभी तक खुले हैं। खुले हुए मैदान में, पेड़ों की छाया में, तीन भट्टियाँ खुदी हैं। एक बड़ों का लंगरखाना है, जहाँ खिचड़ी बँटती है। करीब सौ आदमी आज भी उसी पर पलते हैं। मैली-कुचली औरतों के जमघट में कुछ बैठी चूल्हा फूँक रही थीं। एक औरत ने बताया, कि बच्चों के दो लंगरखाने हैं-एक हिन्दू, एक मुसलमान। दोनों में सौ-सौ बच्चे खाते हैं। साढ़े सात सेर खिचड़ी बँटती है और कुछ मछली, बस इतना ही! किसी तरह लोग जी-भर रहे हैं। भट्टाचार्यजी ने बताया कि फ्रेंड्स एम्बूलैंस यूनिट इन्हें चला रहा है।

मैं और भट्टाचार्य आगे चल पड़े फिर हम दोनों एक पेड़ के नीचे बैठ गये। भट्टाचार्यजी कहने लगे,"तुमने देखा, साढ़े सात सेर? सौ में कितना पड़ा?'

सामने भट्टी में से धुआँ निकलकर ऊपर घुमड़ रहा था। आज सारा बंगाल महानाश की आग पर लटका भुन रहा है और चारों ओर से राक्षस मानो उसे चबा जाना चाहते हैं। इतने में डॉक्टर आ गया। उसके साथ एक औरत थी, जो रो रही थी। मुझे बड़ा विस्मय हुआ। यहाँ लोग अभी तक रो सकते हैं! तब तो इन्हें हृदय है। वह कह रही थी--"दवाखाना लेकर अब आये हो? पहले आते, तो मेरे बच्चे तो बच जाते..!" अरे, वह माँ थी। उसके छ: बच्चे मर गये थे। और सिर्फ दो बचे थे।

"मैं अब यहीं लंगरखाने में काम करती हूँ, किसी तरह पेट भर जाता है। भीख नहीं माँगी जाती, बाबू.....!"और वह फिर रो पड़ी-'मेरे बच्चे....!' दिल कड़ा कर हम लोग वहाँ से चल दिये। वह आँखों में आँसू-भरे शत-शत आशीर्वाद देती-सी -ज्यों-की त्यों खड़ी रही।

खेतों में कब्रें चुपचाप उदास-सी सोयी पड़ी थीं, जिन्हें चिथड़ों में लिपटा एक बुड्ढा एक पेड़ की छाया में बैठा विरक्त भाव से देख रहा था। एक टूटी-सी दीवार में तीन आले अब भी खड़े थे; मगर घर नहीं थे। आठों घर विध्वस्त पड़े थे। उनके सामने बराबर-बराबर में तीस कब्रें पड़ी थीं और एक नवयुवक, जो देखने में बुड्ढा लगता था, उनकी और देख-देखकर मुस्करा रहा था। वे सब एक दिन जुलाहों के घर थे; पर अकाल के ताने और बीमारियों के बाने ने सहसा उनके जीवन-व्यापार का अन्त कर दिया था।

"दिन में नहीं, दिन में नहीं, रात को," भट्टाचार्यजी कहने लगे, "गाँव में कब्रिस्तान की-सी छायाएँ नाचने लगती हैं।, शिद्धिरगंज कभी भी नहीं भूलेगा कि एक दिन आदमी के बनाए अकाल ने उसका सत्यानाश कर दिया था। जो आदमी अपनी हड्डियों से -दधीचि की हड्डियों से यह अमर कथा लिख गये हैं, बंगाल उनकी ज्वलन्त स्मृति को कभी नहीं भुलाएगा।"

मेरे मुँह से हठात् निकल गया- 'उसे हिन्दुस्तान कभी नहीं भुलाएगा भट्टाचार्यजी, मानवता उसे कभी नहीं भुला सकेगी।'

डॉक्टर आगे-आगे चल रहा था। हम लोग लौट रहे थे। नदी की पतली धारा में कुछ नंगे लड़के नहा रहे थे, जिनकी पतली हड्डियों से टकराकर छोटी-छोटी लहरें मानो निराश-उदास लौट जाती थीं। उन्होंने देखा और समवेत स्वर में चिल्ला उठे-"इन्कलाब जिन्दाबाद! इन्कलाब जिन्दाबाद!!"

गर्व से मेरी छाती फूल उठी। कौन कहता है कि बंगाल मर गया है? जहाँ भूख और बीमारियों से लड़कर भी मनुष्यों के बालकों में क्रान्ति को चिरजीवी रखने का अपराजित साहस है, वह राष्ट्र कभी भी नहीं मर सकेगा। हड्डी-हड्डी से लड़ने वाले यह योद्धा जीवन की महान शक्ति को अभी तक अपने में जीवित रख सके हैं। संसार कहता है, स्टालिनग्राड में लोग खंडहरों में से लड़े थे और उन्होंने दुश्मन के दाँत खट्टे कर दिये। उन्होंने बर्बरता की धारा को रोककर रूस को गुलाम होने से बचा दिया। किन्तु मैं पूछता हूँ क्या शिद्धिरगंज दूसरा स्टालिनग्राड नहीं? मनुष्य भूख से तड़प-तड़पकर यहाँ जान दे चुके हैं, वे भीषण रोगों का शिकार हो चुके हैं, उनके घर खंडहर हो गए हैं, कब्रों से जमीन ढँक गयी है, नदियों में लाशों की सड़ाँध एक दिन दूर-दूर तक फैल गयी थी, किन्तु मनुष्य का साहस जीवित है। आज भी बंगाल के बच्चे क्रान्ति को नहीं भूले हैं। क्या इन योद्धाओं ने भारतीय संस्कृति की जड़ों पर होनेवाले आघात को सहकर आज संसार को यह नहीं दिखला दिया कि जनशक्ति कभी पराजित नहीं हो सकती, वह कभी मर नहीं सकती? जब फासिस्तबाद से भी बर्बर नर-पिशाच मुनाफाखोरों ने नाज पर बैठकर जहर उगला, कपड़ा-चोरों ने उनकी बहू-बेटियों को निर्लज्ज होने दिया, तब भी क्या इन्होंने सिर झुकाया? नहीं, ये वीरों की तरह लड़े हैं। आज शिद्धिरगंज की पृथ्वी शहीदों के मजारों से ढँक गयी है। युग-युग- तक संसार को याद रखना पड़ेगा कि एक दिन मुनष्य के स्वार्थ

और असाम्य के कारण, गुलामी और साम्राज्यवादी शासन के कारण, बंगाल जैसी शस्य-श्यामला भूमि में भी मनुष्य को भूख से दम तोड़ना पड़ा था ? और लोगों ने उसे पूरी शक्ति से इसलिए झेला था कि मानवता जीवित रहना चाहती थी। उसे कोई मिटा नहीं सकता।

आज अकाल का वह पहला भीषण स्वरूप समाप्त हो चुका है। किन्तु रोगों की वर्षा-आँधी के बाद प्रलय उमड़ रही है और इस समय भी लोग कहते हैं-बंगाल का अकाल समाप्त हो चुका है! पर आज यह कुछ नहीं तो भी महामरण का भीषण नृत्य है। जब हम लोग शिद्धिरगंज से लौट रहे थे, शीतलता की प्रशान्त धारा में नहाता हुआ एक आदमी गा रहा था--

''सोनार बांगला होलो शोंशान, एक साथे सबे चल।"

उसका यह स्वर दूर-दूर तक लहरों पर फैल उठता था।

शब्दार्थ-टिप्पणी

उसांस उच्छ्वास, साँस **बरबस** अचानक **विक्षुब्ध** बेचैन **अनगढ़** बिना गढ़ा हुआ **विध्वस्त** नाश,नष्ट **अर्गला** किवाड़ के पीछे लगाने का डंडा **कारड** कार्ड

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) ढाके की मलमल क्यों खतम हो गई ?
(2) शिद्धिरगंज के लोगों का दु:ख व्यक्तिगत नहीं सामूहिक था कैसे ?
(3) अकाल और बीमारियों की बजह से रोज कितने आदमी मरते थे ?
(4) लोग लंगरखाने में क्यों खाते थे ?
(5) गाँव में कैसी-कैसी बीमारियाँ फैली थी ?
(6) गाँव की स्त्रियों की स्थिति कैसी थी ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'कपड़ा बनाने वाले स्वयं नंगे थे'- समझाइए।
(2) ढाके की साड़ियाँ बुननेवालों की हालत कैसी थी ?
(3) बंगाल आज भी जीवित क्यों है ?
(4) बंगाल की स्थिति का वर्णन कीजिए।
(5) जुलाहों के घर का अंत क्यों हो गया ?

3. मुहावरों के अर्थ देकर वाक्य प्रयोग कीजिए :

गला न छूटना, दिल कड़ा करना, दाँत सट्टे करना, भूख से दम तोड़ना

योग्यता- विस्तार

- आदमी के बनाए अकाल ने सत्यानाश कर दिया कैसे ? चर्चा कीजिए।
- "जब जिन्दों के कपड़ा नहीं है, तो मरों की क्या कीमत"-समझाइए।
- 'अकाल और उसके बाद'-कविता पिढ़ए।
- 'मानवी नी भवाई' (गुजराती) फिल्म देखिए।

•

11 याचना

कन्हैयालाल नंदन

(जन्म : सन् 1933 ई; निधन :न् 2010 ई.)

प्रसिद्ध कवि-पत्रकार कन्हैयालाल नंदन का जन्म उत्तरप्रदेश के फतेहपुर जिले में हुआ था। इलाहाबाद से उच्चशिक्षा प्राप्त कर भावनगर विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। जीवन के कुछ वर्ष तक मुंबई विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। पत्रकारिका उनका प्रिय विषय रहा। उन्होंने टाइम्स ऑफ इंडिया के साप्ताहिक 'धर्मयुग' में सह-संपादक एवं 'सारिका' तथा 'दिनमान' जैसी विशिष्ट पत्रिकाओं में संपादक के रूप में काम किया। 'नवभारत टाइम्स' एवं 'सन्डे मेल' के प्रदान संपादक के रूप में सराहनीय काम किया। भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में उनकी रचनाओं के अनुवाद प्राप्त होते हैं।

'मुझे मालूम है', 'समय की दहलीज' एवं 'एक टुकड़ा वसंत' उनके मुख्य कविता संग्रह हैं। 'अंतरंग', 'जरिया-नजरिया', 'आग के रंग', 'धार के आरपार' उनके समीक्षा ग्रंथ हैं। 'घाट-घाट का पानी', 'विदेशी धरती', 'धरती लाल गुलाबी चेहर' उनके संस्मरण ग्रंथ हैं। श्रेष्ठ हास्य कथाएँ, श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ, श्रेष्ठ हिन्दी गीत-संचयन आदि संपादन-ग्रंथ हैं।

प्रस्तुत कविता में माँगने की अपेक्षा देने को अधिक महत्त्वपूर्ण बताया गया है। याचना दारिद्रय का प्रतीक है और देना भीतरी समृद्धि का। कवि ने पहाड़ से, झरने, दूब, फूलों आदि से जो-जो माँगा, नहीं मिला। हताश और आहत कवि पर तरस खाते हुए हवा ने धीरे से उसके कान में कहा- माँगने से नहीं, निश्छल होकर देने से सब कुछ पाओगे। जो जितना बाँटेगा वह उतना ही अधिक पाएगा। जीवन के एक महत्त्वपूर्ण मूल्य की अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है।

मैंने पहाड़ से माँगा
अपनी स्थिरता का थोड़ा अंश मुझे दे दो
पहाड़ का मन न डोला

मैंने झरने से कहा
दे दो थोड़ी सी अपनी गति मुझे भी
झरना अपने नाद में मस्त रहा
कुछ न बोला

मैंने दूब से माँगी थोड़ी-सी पवित्रता
वह अपने दलों में मुस्कराती रही
मैंने फूलों से माँगी जरा-सी कोमलता
और चिड़िया से

उसका चुटकी भर आकाश
लहरों से थोड़ी-सी चंचल तरलता
धूप से एक टुकड़ा उजास

ओक में भरने को खड़ा रहा देर तक
कहीं से कुछ न पाया
याचना अकारथ जाते देख
आहत मन लौट आया
तरस खाया हवा ने

हौले से कान में बोली
नाहक हो उदास
अपने लिए माँगने से बाहर निकलो
निश्छल, सहज हो जाओ
यह ,सब प्रचुर है तुम्हारे पास
माँगने से कुछ नहीं मिलेगा
देने से पाओगे
जितना ही हरियाली बाँटोगे
अंदर हरे हो जाओगे।

शब्दार्थ-टिप्पणी

ओक अँजुरी **हौले** धीरे **उजास** उजाला **अकारण** व्यर्थ, निरर्थक

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवि पहाड़ से क्या माँगता है ?

(2) झरने से माँगने पर उसकी क्या प्रतिक्रिया होती है ?

(3) कवि चिड़िया और धूप से क्या माँगता है ?

(4) हवा कवि के कान में क्या राज कहती है ?

(5) कवि आहत मन से क्यों लौट आया ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कवि किस-किस से क्या-क्या माँगता है ?

(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

‘जितनी ही हरियाली बाँटोगे
अंदर हरे हो जाओगे।’

योग्यता-विस्तार

- अज्ञेय की ‘सवेरे उठा तो धूप खिली थी’ कविता से इसकी तुलना कीजिए।

•

12	# परमात्मा का कुत्ता

मोहन राकेश

(जन्म: सन् 1925 ई.; निधन सन् 1972 ई.)

स्वातंत्र्योत्तर युगीन कथाकार-नाटककार मोहन राकेश का जन्म अमृतसर में हुआ था। उनका बचपन का नाम मदन मोहन गुगलानी था। उनकी उच्च शिक्षा लाहौर में हुई। उन्होंने कई शहरों में अध्यापन कार्य किया। कुछ समय के लिए 'सारिका' का संपादन भी किया। लेखन-कार्य उनके जीवन की मुख्य प्रवृत्ति रही।

हिन्दी नाटक को एक नई दिशा देने में उनका योगदान महत्वपूर्ण रहा। 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' और 'आधे-अधूरे' उनके प्रयोगशील रंग नाटक हैं। 'अंधेरे बंद कमरें', 'न आने वाला कल' प्रमुख उपन्यास हैं। 'नये बादल', 'इंसान के खंडहर', 'जानवर और जानवर',' रेशे-रेशे', 'क्वार्टर', 'वारिश' आदि मुख्य कहानी संग्रह हैं। 'अंडे के छिल के और अन्य एकांकी' उनका एकांकी संग्रह है। नई-कहानी आंदोलन के साथ उनकी वैचारिक सक्रियता उल्लेखनीय रही।

प्रस्तुत कहानी देश के सरकारी तंत्र की जड़ता-शिथिलता और उसमें व्याप्त रिश्वतखोरी पर आक्रोशपूर्ण व्यंग्य करती है। बिना रिश्वत सामान्य आदमी की फाइल आगे बढ़ती ही नहीं। कहानी का मुख्य पात्र एक अघेड़ आदमी है जो अपनी जमीन के अधिकार के लिए वर्षों से दफ्तर का चक्कर काट रहा है। उसे लगता है कि उसके जीते जी उसकी अर्जी पास नहीं होगी। जब उसके धैर्य का अंत हो जाता है तब वह सरकारी बाबुओं को सरकारी कुत्ते और अपने आपको परमात्मा का कुत्ता बतलाकर भौंकने लगता है। अंततः नंगा हो जाने की कोशिश करता है तब जाकर कमिश्नर स्वयं आकर उसे दफ्तर में ले जाता है और उसकी अर्जी पर फैसला होता है। वह जाते-जाते दूसरों से भी कहता है "चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता। सबके सब भौंको। अपने आप सालों के कानों के परदे फट जाएँगे। भौंको कुत्तों, भौंको..." यह संवाद भ्रष्टाचार से लड़ने की प्रेरणा देता है। कहानी में निहित व्यंग्य बहुत तीखा है।

बहुत से लोग यहाँ-वहाँ सिर लटकाये बैठे थे, जैसे किसी का मातम करने के लिए इकट्ठे हुए हों। कुछ लोग अपने साथ लाई हुईं पोटलियाँ खोलकर खाना खा रहे थे। दो एक व्यक्ति पगड़ियाँ सिर के नीचे रखकर कम्पाउण्ड के बाहर सड़क के किनारे बिखर गए थे। चने-कुलचेवाले का रोजगार गर्म था और कमेटी के नल के पास छोटा-मोटा क्यू लगा था। नल के पास कुर्सी डालकर बैठा हुआ अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था। उसके माथे से पसीना बह कर उसके होंठों पर आ रहा था लेकिन उसे पोछने की फुरसत नहीं थी। सफेद दाढ़ियोंवाले दो-तीन लम्बे जाट अपनी लाठियों पर झुके हुए उसके खाली होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। धूप से बचने के लिए लगाया हुआ टाट हवा से उड़ा जा रहा था और थोड़ी दूर मूढ़े पर बैठा हुआ उसका लड़का अपनी अंग्रेजी प्राइमर को रट्टा लगा था--"सी. ए. टी. कैट, माने बिल्ली; बी. ए. टी. बैट, माने बल्ला; एफ ए. टी फैट, फैट माने मोटा...।" कमीजों के बटन आधे खोले हुए और फाइलें बगल में दवाये हुए कुछ बाबू, एक-दूसरे से छेड़खानी करते हुए रजिस्ट्रेशन ब्रांच से रिकार्ड ब्रांच की तरफ जा रहे थे। लाल बेल्टवाला चपरासी आस -पास की भीड़ से उदासीन अपने स्टूल पर उकडूँ होकर बैठा मन-ही-मन कुछ हिसाब कर रहा था। कभी उसके होंठ हिलते थे और कभी उसका सिर हिल जाता था। सारे कम्पाउण्ड में सितम्बर की खुली धूप फैली हुई थी। चिड़ियाँ डालों से कूदने और फिर ऊपर को उड़ने का अभ्यास कर रही थीं और कौए पोर्च के सिरे पर चहलकदमी कर रहे थे। एक सत्तर-पिचहत्तर की बुढ़िया, जिसका सिर हिल रहा था और चेहरा झुर्रियों के गुंझल के सिवा कुछ नहीं था, लोगों से पूछ रही थी कि वह अपने लड़के के मरने के बाद उसके नाम एलॉट हुई जमीन की हकदार है या नहीं...।

अन्दर हॉल कमरे में फाइलें धीरे-धीरे हिल रही थीं। दो-चार बाबू बीच की मेज के पास जमा होकर चाय पी रहे थे। उनमें से एक दफ्तरी कागज पर लिखी हुई अपनी ताजी गजल यारों को सुना रहा था, और यार इस विश्वास के साथ सुन रहे थे कि वह जरूर उसने 'शमा' या 'बीसवीं सदी' के पुराने अंक में से चुराई है।

"अजीज साहब, ये शेर आपने आज ही कहे हैं या दो-तीन साल पहले कहे हुए शेर आज अचानक याद आ गये हैं ?" साँवले चेहरे और घनी काली मूँछोंवाले एक बाबू ने बाईं आँख को जरा-सा दबाकर पूछा। आसपास सब लोगों के चेहरे खिल गए।

"यह मेरी ताजा गजल है" -अजीज साहब ने अदालत के कटहरे में खड़े होकर हलफिया सच बोलने के लहजे में कहा। "इससे पहले इसी वजन पर कोई और चीज कही हो तो याद नहीं।" और आँखों से सबके चेहरों को टटोलते हुए उन्होंने हल्की-सी हँसी के साथ कहा-"अपना दीवान तो कभी कोई रिसर्च करने वाला ही मुरत्तब करेगा...।"

एक फरमायशी कहकहा लगा, जिसे शी-शी की आवाजों ने बीच में ही दबा दिया। कहकहें पर लगाई ब्रेक का मतलब था कि कमिश्नर साहब अपने कमरे में तशरीफ ले आए हैं। कुछ क्षणों का वक्फा रहा, जिसमें सुरजीतसिंह वल्द गुरमीतसिंह की फाइल एक्शन के लिए दूसरी मेज पर चली गई। सुरजीतसिंह वल्द गुरमीतसिंह मुस्कराता हुआ हॉल से बाहर चला गया और जिस बाबू की मेज से फाइल गई थी, वह नये पाँच रुपये के नोट को सहलाता हुआ चाय पीनेवालों के जमघट में आ शामिल हुआ। अजीज साहब अब काफी धीमी आवाज में अपनी गजल का अगला शेर सुनाने लगे। साहब के कमरे की घंटी हुई। चपरासी मुस्तैदी से उठकर कमरे में गया और उसी मुस्तैदी से बाहर आकर अपने स्टूल पर बैठ गया।

चपरासी से खिड़की का पर्दा ठीक कराकर कमिश्नर साहब ने मेज पर रखे हुए कागजों पर एक साथ दस्तखत किए और पाइप सुलगाकर रीडर्स डाइजेस्ट का ताजा अंक पढ़ने लगे। लेटीशिया बालड्रिज का लेख कि उसे इतालवी मर्दों से क्यों प्यार है, वे पढ़ चुके थे। और लेखों में हृदय कि शल्यचिकित्सा के सम्बन्ध में जे. डी. रैटक्लिफ का लेख उन्होंने सबसे पहले पढ़ने के लिए चुन रखा था। पृष्ठ एक सौ ग्यारह खोलकर उन्होंने हृदय के नये आपरेशन का ब्यौरा पढ़ना आरम्भ किया।

तभी बाहर शोर सुनाई देने लगा।

कम्पाउण्ड में पेड़ के नीचे बिखकर बैठे हुए लोगों में तीन आकृतियाँ आ शामिल हुई थीं। एक अधेड़ आदमी था जिसने अपनी पगड़ी नीचे बिछा ली थी और हाथ पीछे करके और टाँगें फैलाकर उस पर बैठ गया था। पगड़ी के एक खाली छोर पर, उससे जरा बड़ी उम्र की स्त्री और जवान लड़की बैठी थी और उसके पास ही खड़ा एक दुबला-सा लड़का अपने आस-पास की हर चीज को घूर रहा था! पुरुष की फैली हुई टाँगें धीरे-धीरे पूरी खुल गई थीं और आवाज इतनी ऊँची हो गई थी कि कम्पाउण्ड के बाहर भी बहुत से लोगों का ध्यान उसकी ओर खिंच गया था। वह बोलने के साथ घुटने पर हाथ मार रहा था- "सरकार वक्त ले रही है। दस-पाँच साल में सरकार फैसला करेगी कि अर्जी मंजूर होनी चाहिए या नहीं। सालों, यमराज भी तो हमारा वक्त गिन रहा है। उधर वह हमारा वक्त पूरा करेगा और तुम कहना कि तुम्हारी अर्जी पास हो गई है।"

चपरासी की टाँगें स्टूल से नीचे उतरीं और वह सीधा हो गया। कम्पाउण्ड में बिखरकर बैठे और लेटे हुए सब लोग अपनी-अपनी जगह पर कस गए। कई लोग पेड़ के पास जमा हो गए।

"दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालों, जमीन के नाम पर तुमने जो गड्ढा एलाट कर दिया है, उसकी जगह मुझे दूसरी जमीन दो। मगर दो साल से अर्जी दो कमरे पार नहीं कर पाई।" यह आदमी बोलता रहा-"इस कमरे से उस कमरे में अर्जी के जाने में वक्त लगता है। इस मेज से उस मेज तक जाने में वक्त लगता है। सरकार वक्त ले रही है। लो मैं आ गया हूँ। यहीं पर अपनाघर-बार लेकर। ले लो जितना तुम्हें लेना है। सात साल की भुखमरी के बाद मुझे जमीन दी है...सौ मरले का गड्ढा । उसमें मैं बाप-दादों की अस्थियाँ गाड़ूँ? अर्जी दी थी कि मुझे सौ मरले दे दो, लेकिन जमीन तो दी। मगर अर्जी दो साल से वक्त ले रही है। मैं भूखा मर रहा हूँ और अर्जी वक्त ले रही है।"

चरपरासी अपने हथियार लिए हुए उठा...माथे पर तेवर और आँखों में आक्रोश। आस-पास जमा भीड़ को हटाता हुआ वह उसके सामने आ गया।

"ए मिस्टर, चल हियाँ से बाहर।" उसने हथियारों की पूरी चोट के साथ कहा- "चल उठ।"

"मिस्टर यहाँ से नहीं उठ सकता।"- वह आदमी बोला। "मिस्टर यहाँ का बादशाह है। पहले मिस्टर देश के बेताज बादशाहों की जय बुलाता था। अब वह किसी की जय नहीं बुलाता। अब वह आप बादशाह हैं...बेलाज बादशाह। उसे कोई लाजशरम नहीं है। उस पर किसी का हुकम नहीं चलता। समझे चपरासी बादशाह?"

"अभी पता चल जाएगा तुझे कि तुझ पर किसी का हुकम चलता है या नहीं।" चपरासी बादशाह और गरम हुआ।-"अभी पुलिस के सुपुर्द कर दिया जाएगा तो सारी बादशाही निकल जाएगी...।"

"हा-हा!" बेलाज बादशाह हँसा।- "तेरी पुलिस मेरी बादशाही निकालेगी? मैं पुलिस के सामने नंगा हो जाऊँगा और कहूँगा कि निकालो मेरी बादशाही। हममें से किस-किस की बादशाही निकालेगी पुलिस? ये मेरे साथ तीन बादशाह और हैं। यह मेरे भाई की बेवा है। उस भाई की, जिसे पाकिस्तान में टाँगों से पकड़कर चीरा गया था। यह मेरे भाई का लड़का है, जो अभी से

तपेदिक का मरीज हो गया है। और यह मेरे भाई की लड़की है, जो अब ब्याहने लायक हो गई है। इसकी बड़ी बहन पाकिस्तान में है। आज मैंने इन सबको बादशाही दे दी है। ले आ तू जाकर पुलिस कि आकर इन ,सबकी बादशाही निकाल दे। कुत्ता साला...।"

अन्दर से कई-एक बाबू निकल कर बाहर आ गए। 'कुत्ता साला' सुनकर चपरासी आपे-से बाहर हो गया। वह तैश में उसे बाँह पकड़कर घसीटने लगा- "अभी तुझे पता चल जाता है कि कौन साला कुत्ता है। मैं तुझे मार-मार कर..." और उसने उसे अपने टूटे हुए बूट की ठोकर दी। स्त्री और लड़की सहम कर वहाँ से हट गईं। लड़का रोने लगा।"

बाबू लोग भीड़ को हटाते हुए आगे बढ़ गये और उन्होंने चपरासी को पकड़कर हटा लिया। चपरासी बड़बड़ाता रहा-- "कमीना आदमी दफ्तर में आकर गाली देता है। मैं अभी तुझे..."

"एक नहीं तुम सब के सब कुत्ते हो-" वह आदमी कहता रहा। "तुम भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ। फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो। हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से हो? मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ। उसकी दी हुई हवा को खा कर जीता हूँ और उसकी तरफ से भौंकता हूँ। उसका घर इन्साफ का घर है। मैं उसके घर की रखवाली करता हूँ। तुम सब उसकी इन्साफ की दौलत के लुटेरे हो। तुम पर भौंकना मेरा फर्ज है। मेरे मालिक का फरमान है। मेरा तुमसे असली बैर है! कुत्ते का कुत्ता दुश्मन होता है। तुम मेरे दुश्मन हो, मैं तुम्हारा दुश्मन हूँ। मैं अकेला हूँ! इसलिए तुम सब मिलकर मुझे मेरा भौंकना बन्द नहीं कर सकते। मेरे अन्दर मेरे मालिक का नूर है। मेरे वाहगुरु का तेज है। मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौंकूँगा और भौक-भौंककर सबके कान फोड़ दूँगा। साले; आदमी के कुत्ते ; जूठी हड्डी पर मरने वाले कुत्ते,-दुम हिला-हिलाकर जीनेवाले कुत्ते...।"

"बाबा जी बस करो"- एक बाबू हाथ जोड़कर बोला। "लोगों पर रहम खाओ और अपनी यह सन्तबानी बन्द करो। तुम बताओ, तुम्हारा केस क्या है, तुम्हारा नाम क्या है... ?"

"मेरा नाम है बारह सौ छब्बीस बटा सात। मेरे माँ-बाप का दिया हुआ नाम खा लिया कुत्तों ने। अब यही नाम है, जो तुम्हारे दफ्तर का दिया हुआ है। मैं बाहर सौ छब्बीस बटा सात हूँ। मेरा और कोई पता नहीं है। मेरा नाम याद कर लो। अपनी डायरी में लिख लो। वाहगुरु का कुत्ता-बारह सौ छब्बीस बटा सात।"

"बाबा जी, आज जाओ, कल-परसो आ जाना। तुम्हारी अर्जी की कार्यवाही तकरीबन-तकरीबन पूरी हो चुकी है..."

"तकरीबन-तकरीबन पूरी हो चुकी है और मैं अब तकरीबन तकरीबन पूरा हो चुका हूँ। अब सिर्फ यह देखना है कि पहले वह पूरी होती है या पहले मैं पूरा होता हूँ। एक तरफ सरकार का हुनर है और दूसरी तरफ परमात्मा का हुनर है। तुम्हारा तकरीबन अभी दफ्तर में ही रहेगा और मेरा तकरीबन-तकरीबन कफन में पहुँच जाएगा। सालों ने सारी पढ़ाई खर्च करके दो लफ्ज ईजाद किए हैं-शायद और तकरीबन। शायद आपके कागज ऊपर चले गए हैं-तकरीबन-तकरीबन कार्यवाही पूरी हो गई है। शायद से निकालो तो तकरीबन में डाल दो और तकरीबन से निकालो तो शायद में गर्क कर दो। 'तकरीबन-तीन चार महीने में तहकीकात होगी। शायद महीने-दो महीने में रिपार्ट आएगी।' मैं आज शायद और तकरीबन, दोनों को छोड़ आया हूँ। मैं यहाँ बैठा हूँ और यहीं बैठूँगा। मेरा काम होना है तो आज ही होगा और अभी होगा। तुम्हारे शायद और तकरीबन के ग्राहक ये सब खड़े हैं। यह ठगी इनसे करो...।"

बाबू लोग अपनी सद्‌भावना से निराश होकर एक-एक करके अन्दर लौटने लगे।

"बैठा है, बैठा रहने दो।"

"बकता है, बकने दो।"

"साला बदमाशी से काम निकालना चाहता है।"

"लेट हिम बार्क हिमसेल्फ टू डेथ।"

बाबुओं के साथ चपरासी भी बड़बड़ाता हुआ अपने स्टूल पर लौट आया-"मैं साले के दाँत तोड़ देता। अब बाबू लोग हाकिम हैं और हाकिमों का कहा मानना पड़ता है, वरना.."

''अरे बाबू, शांति से काम ले। यहाँ मिन्नत चलती है, पैसा चलता है, धौंस नहीं चलती। भीड़ में से कोई उसे समझाने लगा।''

वह आदमी उठकर खड़ा हो गया।

"मगर परमात्मा का हुकम हर जगह चलता है"-वह कमीज उतारता हुआ बोला। "और परमात्मा के हुकम से आज बेलाज बादशाह नंगा होकर कमिश्नर के कमरे में जाएगा। आज वह नंगी पीठ पर साहब के डण्डे खाएगा। आज वह बूटों की

ठोकर खाकर प्राण देगा। लेकिन वह किसी की मिन्नत नहीं करेगा; किसी के पैसा नहीं चढ़ाएगा; किसी की पूजा नहीं करेगा। जो वाहगुरु की पूजा करता है, वह और किसी की पूजा नहीं करता। तो वाहगुरु का नाम लेकर...।"

इससे पहले कि वह अपने कहे को किये में परिणत करता, दो-एक आदमियों ने बढ़कर उसके हाथ पकड़ लिए। बेलाज बादशाह हाथ छुड़ाने के लिए संघर्ष करने लगा।

"मुझे जाकर इनसे पूछने दो कि क्या इसीलिए महात्मा गांधी ने इन्हें आजादी दिलाई थी कि ये आजादी के साथ इस तरह सलूक करें? उसकी मिट्टी खराब करें? उसके नाम पर कलंक लगायें। उसे टके-टके की फाइलों में बाँधकर जलील करें? लोगों के दिलों में उसके लिए नफरत पैदा करें? इन्सान के तन पर कपड़े देखकर, इन लोगों की बात समझ में नहीं आती। शरम उसे होती है जो इन्सान हो। मैं तो आप कहता हूँ कि मैं इन्सान नहीं, कुत्ता हूँ।"

सहसा भीड़ में एक दहशत-सी फैल गई। कमिश्नर साहब कमरे से बाहर निकल आए थे। वे माथे की तेवरियों और चेहरे की झुर्रियों को गहरा किए हुए भीड़ के पास आ गए।

"क्या बात है? क्या चाहते हो तुम?"

"आपसे मिलना चाहता हूँ साहब-" वह व्यक्ति साहब को घूरता हुआ बोला। "सौ मरले का एक गड्ढा मेरे नाम एलाट हुआ है। वह गड्ढा वापस करना चाहता हूँ, ताकि सरकार उसमें एक तालाब बनवा दे और अफसर लोग शाम को वहाँ बैठकर मछलियाँ मारा करें। या उस गड्ढे को सरकार एक तहखाना बना दे और मेरे जैसे कुत्तों को वहाँ बन्द कर दे...।"

"ज्यादा बातें मत करो अपना केस लेकर मेरे पास आओ।

मेरा केस मेरे पास नहीं है साहब। दो साल से सरकार के पास है, आपके पास है। मेरे पास अपना शरीर और दो कपड़े हैं। चार दिन बाद ये भी नहीं रहेंगे, इसलिए इन्हें आज ही उतारें देता हूँ। बाकी सिर्फ बारह सौ छब्बीस बटा सात रह जाएगा। बारह सौ छब्बीस बटा सात परमात्मा के हुजूर में भेज दिया जायगा...। "

"बातें बन्द करो और मेरे साथ आओ।"

कमिश्नर साहब अपने कमरे की तरफ चल दिए। वह आदमी भी कमीज कन्धे पर रखे हुए उनके साथ-साथ चलने लगा।

"दो साल चक्कर लगाता रहा, किसी ने नहीं सुना। खुशामदें करता रहा, किसी ने नहीं सुना। नाश्ते देता रहा, किसी ने नहीं सुना...।"

चपरासी ने चिक उठा दी और कमिश्नर साहब के साथ वह अन्दर चला गया। घण्टी बजी; फाइलें हिलीं; बाबुओं की बुलाहट हुई और अध घण्टे बाद बेलाज बादशाह मुस्कराता हुआ बाहर निकल आया। उत्सुक आँखों की भीड़ ने उसे देखा तो वह फिर बोलने लगा-"चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता। भौंको, सबके सब भौंको। अपने-आप सालों के कानों के परदे फट जाएँगे। भौंको, कुत्तों, भौंको...।"

उसकी भावज दोनों बच्चों के साथ गेट के पास खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी। वह दोनों बच्चों के कन्धों पर हाथ रखे हुए सचमुच बादशाह की तरह सड़क पर चलने लगा।

"हयादार हो तो सालों मुँह लटकाए खड़े रहो। अर्जियाँ टाइप कराओ और नल का पानी पियो। सरकार वक्त ले रही है। और नहीं तो बेहया बनो। बेहयाई हजार बरकत है।"

वह सहसा रुका और जोर से हँसा।

"यारों, बेहयाई हजार बरकत है।"

उसके चले जाने के बाद कम्पाउण्ड में और उसके आस-पास मातमी वातावरण और गहरा हो गया। भीड़ धीरे-धीरे बिखरकर अपनी-अपनी जगहों पर चली गई। चपरासी की टाँगे फिर स्टूल पर उठ गई। सामने कैन्टीन का लड़का बाबुओं के कमरे में एक सेट चाय ले गया। अर्जीनवीस की मशीन चलने लगी और टिक-टिक आवाज के साथ उसका लड़का फिर अपना सबक दोहराने लगा। पी ई एन, पेन; पेन माने कलम; एच ई एन हेन, माने मुर्गी; एन डेन, डेन माने अँधेरी गुफा...।"

शब्दार्थ-टिप्पणी

मातम शोक **कंपाउंड** आहाता, प्रांगण **क्यू** लाईन **अर्ज़ी** आवेदन पत्र, प्रार्थना पत्र **फुरसत** खाली समय, अवकाश **दीवान** मंत्री **रिसर्च** शोध **मुरत्तब** क्रमबद्धता,संपादित किया हुआ **फरमायशी** अनुरोध **तशरीफ** महत्त्व, आदर **वक्फा** समय **एक्शन** सक्रिय **दस्तखत** हस्ताक्षर **मुस्तैदी** चुश्ती,कटिबद्धता **एलॉट** आवंटन **बेलाज** बिना लाज का **तकरीबन** लगभग **हुनर** कला,गुण **दफ्तर** कार्यालय, **लफ्ज** बात, जबान **ईजाद** आविष्कार,नयी बात पैदा करना **तहकीकात** जाँच पड़ताल **मिन्नत** विनती **सलूक** व्यवहार **खुशामद** झूठी प्रसंशा, चापलूसी **हयादार** शर्म रखनेवाला **बेहयाई** निर्लज्जता

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) बाबू लोग कहाँ जा रहे थे ?

(2) लालबेल्टवाला चपरासी क्या कर रहा था ?

(3) 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में किन पक्षियों के नाम आए हैं ?

(4) 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में किस महीने का जिक्र है ?

(5) कमिश्नर साहब कौन-सी पत्रिका पढ़ रहे थे ?

(6) पाकिस्तान में किसकी टाँगें चीरी गई थीं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) गजल सुनानेवाले का नाम और विशेषता बताइए।

(2) 'सरकार वक्त ले रही है' का आशय स्पष्ट कीजिए।

(3) 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के मुख्यपात्र की स्थिति का वर्णन कीजिए।

(4) सरकारी कुत्ते और परमात्मा के कुत्ते में अंतर समझाइए।

(5) आजादी के बाद आम आदमी के साथ नौकरशाही का व्यवहार कैसा है ?

(6) 'बेहयई हजार बरकत है' का अर्थ समझाइए।

योग्यता-विस्तार

- कहानी में आए उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का चयन करें।
- नौकरशाही के भ्रष्टाचार-केन्द्रित एक कहानी ढूँढ़कर पढ़िए।

•

13 नदी, न पुल

फूलचंद गुप्ता

(जन्म: सन् 1958 ई.)

कवि-कहानीकार फूलचंद गुप्ता का जन्म उत्तरप्रदेश के फैजाबाद जिले के अमराई गाँव रुदौली में हुआ था। प्राथमिक शिक्षा गाँव में हुई। उच्च शिक्षा अहमदाबाद में प्राप्त की। उन्होंने अंग्रेजी और हिन्दी-दो विषयों के साथ गुजरात विश्वविद्यालय से एम. ए. की डिग्री प्राप्त की। साथ ही पत्रकारिता विषय के साथ पोस्ट ग्रेज्युएट डिप्लोमा भी किया। इन दिनों वे उत्तर गुजरात विश्वविद्यालय से संलग्न साबरग्राम विद्यापीठ में अंग्रेजी के अध्यापक के रूप में सेवारत् हैं। उनकी पहली कविता सन् 1973 में प्रकाशित हुई।

फूलचंदजी मूलत: सामाजिक सरोकारों से संबद्ध प्रबुद्ध विचारक हैं। शोषणमुक्त समाज-रचना के लिए उनके मन में एक प्रकार की बेचैनी और व्यग्रता देखने को मिलती है। उन्होंने लंबी कविता और गजलों की भी रचना की है। 'इसी माहौल में', 'हे राम!','साँसत में हैं कबूतर', 'कोई नहीं सुनाता आग के संस्मरण', 'राख का ढेर','महागाथा', 'दीनू और कौवे' उनके कविता संग्रह हैं। 'ख्वाबख्वाहों की सदी है' उनका गजल संग्रह है। 'प्रायश्चित नहीं प्रतिशोध' उनका कहानी संग्रह है।

प्रस्तुत कविता में शहर की अलगाववादी संस्कृति पर व्यंग्य किया गया है। नदी के आसपास शहर दिन-दिन फैलता-बढ़ता जा रहा है। लोग नदी के एक छोर से दूसरे छोर बेतहासा भाग रहे हैं। हजारों वर्षों से नदी के सानिध्य में रहकर भी मनुष्य नदी-सा नहीं बन पाया। वह नदी की तरह लोगों को अपने साथ जोड़ नहीं पाया है, वह सेतु बनने में सफल नहीं हो पाया है।

शहर
शहर के बीचोबीच नदी
शहर फैलता हुआ नदी के दोनों ओर
निस्सीम----
लोग भागते रहते हैं
शहर के दोनों किनारे
इस ओर से उस छोर तक फैले हुए पुल से
लोग भागते रहते हैं, बेतहासा

हजारों वर्षों से जारी है यह सिलसिला

हजारों वर्षों तक सानिध्य में रहने के बावजूद
एक भी व्यक्ति
नदी नहीं बन सका है-
जिसके आसपास आके बस जाएं लोग

न पुल, जो जोड़ सके
बिखरे लोगों को!

शब्दार्थ-टिप्पणी

निस्सीम सीमा रहित **छोर** किनारा **बेतहासा** दम छोड़ कर भागना **सानिध्य** निकट का संपर्क

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) नदी कहाँ स्थित है ?

(2) शहर कहाँ फैल रहा है ?

(3) शहर के दोनों ओर लोग किससे जाते है ?

(4) हजारों वर्षों से कौन-सा सिलसिला जारी है ?

(5) हजारों वर्षों से व्यक्ति किसके सानिध्य में रहा है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) शहरी आदमी के नदी न बन पाने का कारण बताइए।

(2) 'नदी, न पुल' में कवि का मूल आशय स्पष्ट कीजिए।

(3) 'एक भी व्यक्ति / नदी नहीं बन सका है-
जिसके आसपास आके बस जाएँ लोग' की व्याख्या करें।

योग्यता-विस्तार

- नदी और व्यक्ति के आपसी संबंध पर एक निबंध लिखिए।
- नदी के पुल पर लिखी किसी और की कविता खोजकर पढ़िए और समझिए।

•

14 धूप-बत्ती : बुझी, जली !

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

(जन्म: सन् 1906 ई ; निधन:न् 1995 ई.)

प्रभाकरजी का जन्म सरहानपुर जिले के देवबंद गाँव में हुआ था। सत्याग्रह आंदोलन दौरान कई बार इन्हें जेल जाना पड़ा। 'ज्ञानोदय' और 'नया जीवन' जैसी पत्र-पत्रिकाओं का सफल संपादन कर पत्रकारिका के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। हिन्दी साहित्य में सफल रेखाचित्रकार, संस्मरणकार एवं निबंधकार के रूप में प्रतिष्ठित प्रभाकरजी अपनी ललित एवं रोचक शैली के कारण सदैव स्मरणीय रहेंगे। सत्याग्रह आंदोलन के दौरान गाँधीजी से बहुत प्रभावित रहे।

'नयी पीढ़ी नये विचार', 'जिन्दगी मुस्करायी', 'माटी हो गई सोना', 'दीप जले शंख बजे', 'पायलिया के घुँघरू' आदि उनकी बहुचर्चित रचनाएँ हैं।

प्रस्तुत निबंध में धूपबत्ती के बुझने और जलने की छोटी-सी घटना के माध्यम से 'झुकने' अर्थात् विनम्र बनने के महत्व को दर्शाया गया है। अकड़ कर नहीं किंतु झुककर ही कुछ पाया जा सकता है। कहावत एकदम सही है कि बेटा बनकर ही सबने खाया, बाप बनकर नहीं। बुझी हुई धूपबत्ती जब तक अकड़कर खड़ी रही, तीन-तीन दियासलाइयों से भी नहीं जली, किंतु थोड़ी झुका देने पर एक ही दियासलाई के स्पर्श-मात्र से भभक कर जल उठी। पं. मदनमोहन मालवीयाजी ने भी इसी पात्रता-योग्यता के बल पर ही सफलता प्राप्त की थी। लेखक ने देवर-भाभी, कुंदनलाल सुनार तथा रेल-यात्री खान साहब के उदाहरणों द्वारा इसी बात की पुष्टि की है कि कुछ पाने के लिए विनम्रतापूर्वक झुकना जरूरी है। निबंध की भाषा-शैली सहज एवं रोचक है।

अपनी कोठरी में आते ही देखा कि कल सुबह जो धूपबत्ती जलाई थी, वह पूरी तरह जली नहीं ती, कुछ जल कर बुझ गई थी और अब भी ज्यों की त्यों खड़ी है। मुझे वह सिर-जली ऐसी लगी कि जैसे कोई मनुष्य हो, थोड़े-बहुत ज्ञान से जिसका बौद्धिक जागरण तो हो गया हो पर मानसिक विकास न हुआ हो और वह उस बौद्धिक जागरण को अपना संपूर्ण विकास मानकर अहंकार में उफना फिरता हो।

मेरा मन दया से भर गया और मैंने उस धूपबत्ती को बिना उठाए ही फिर से जलाने का निश्चय कर लिया। झट मैंने दियासलाई जलाई और उसे धूपबत्ती के सिर से लगाया दियासलाई जलकर बुझ गई, पर धूपबत्ती न जली। मैंने दियासलाई की दूसरी तीली जलाई और उसे उसके दाहिनी ओर लगाया, पर धूपबत्ती न जली। मैंने तीसरी दियासलाई जलाई और उसे उसके बाईं ओर लगाया, पर वह भी जलकर बुझ गई।

धूपबत्ती अब भी बिना जली, पहले जैसी ही सिर-जली खड़ी थी और मेरे लिए अब कोई मार्ग न था कि उसे खड़ी रहते जला दूँ। मैंने उसे उसके स्थान से उखाड़ लिया और उसे झुकाकर चौथी दियासलाई जलाई। अरे साहब, वह दियासलाई से छूते ही जल उठी। दियासलाई में अब भी इतना दम था कि तैयार हों, तो वह चार-पाँच धूपबत्तियाँ और जला दे !

जली धूपबत्ती ने अपनी सुगंध से कोठरी को भर दिया। यह काम समाप्त हुआ तो बुद्धि ने अपनी कलाबाजी दिखाई: तीन दियासलाइयाँ पूरी जलकर बुझ गईं पर धूपबत्ती न जली और एक दियासलाई के स्पर्श मात्र से ही वह भभक उठी, यह क्या बात है ?

मन ने कहा, ''कोई बात तो है यह; पर प्रश्न तो यह है कि क्या बात है वह ?''

अब ऊहापोह की बारी है, तर्क-वितर्क की बारी है, चिंतन की बारी।

जब तक तीन दियासलाइयाँ जलकर बुझीं, धूपबत्ती खड़ी थी और जब वह चौथी को छूते ही जल उठी, तो झुकी हुई थी।

लगता है, इस अनुभव में मेरे प्रश्न का उत्तर आ गया है, पर वह इतना संकेतात्मक है कि कहूँ-समा गया है। समाए को जानना आवश्यक है, तो सोच रहा हूँ कि धूपबत्ती खड़ी हो या तिरछी, उसमें जलने की शक्ति बराबर ही है, पर खड़ी हुई धूपबत्ती दियासलाई की जवाला को ग्रहण करने में असमर्थ रहती है और तिरछी धूपबत्ती उसे सुगमता से ग्रहण कर लेती है, क्यों कि झुकी हुई धूपबत्ती तो दियासलाई अपनी लौ के पूरे घेरे में ले पाती है और सीधी खड़ी को नहीं।

बात हाथ आ गई, पर बात अपने में इकली-इखहरी बात ही तो नहीं है, उसमें बात-बात में बात भी तो है- ज्यों केले के पात-पात में पात।

तो यह निकली आ रही है बात में-से-बात कि किसी से कुछ लेना हो, तो झुकना आवश्यक है। झुकना, क्या शरीर का ?

नहीं जी, यों झुककर, दण्डवत् लेटकर ही तो फौज के सिपाही गोलियाँ दागते हैं तो झुकना देह का नहीं, भाव का। साफ़-साफ़ यों कि पाने के लिए नम्र होना आवश्यक है। लोकोक्ति है, बेटा बनकर सबने खाया, बाप बन कर किसी ने नहीं। यह बेटा बनना नम्रता ही तो है ?

याद आ रहा है संस्कृत का एक श्लोक, जिसमें सुख की कुंजी बताई गई है-विद्या ददाति विनयं विनयाद याति पात्रताम्। पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मं ततः सुखम्। भाव यह है कि विद्या से मनुष्य में विनय आती है, विनय से पात्रता-पाने की योग्यता-और वह पात्रता से पाता है धन, धन से करता है धर्म, तब सुख-ही-सुख। तो पात्रता का मूल है विनय-नम्रता झुकना। क्यों भला ? नम्रता से दाता के मन में प्रवेश पाना सुगम है, सहज है। इससे दाता के मन में देने की वृत्ति खिलती है, वह देने में सुख देता है और अविनय से वह वृत्ति संकुचित होती है, वह देने में भार मानता है।

हमारे लोक-जीवन में इसका एक मर्मस्पर्शी संस्मरण सुरक्षित है, 'कानी-भाभी' पानी पिला। हाँ, इन बोलों दूध के कटोरे!

भाभी की एक आँख शीतला में मारी गई और अब वह कानी है। उसका देवर, भाभी के लिए जिससे प्यारा कोई रिस्ता नहीं, उससे पानी चाहता है। लोक की ही अभिव्यक्ति है, पानी से भी पतला क्या ? देवर को ही क्या, पानी तो किसी को भी पिलाया जा सकता है, उसके लिए किसी पात्रता की आवश्यकता नहीं।

ठीक है, पानी पीने के लिए पात्रता की आवश्यकता नहीं पर अपात्रता न हो, यह तो आवश्यक है और 'कानी' विशेषण ने, देवर की अविनयी वृत्ति ने, उसकी अपात्रता सिद्ध कर दी है।

भारतीय संस्कार है कि जो अपात्र को दे, वह पतित, तो देवर को भागी का चुभता उत्तर है-हाँ, इन बोलों दूध के कटोरे ! अरे देवरजी, तुम्हारे बोल तो इतने मीठे हैं कि मैं तुम्हें पानी नहीं , दूध पिलाऊँगी, मुँह धोए रहो!'

हमारे लोक-जीवन में विनय का भी एक संस्मरण सुरक्षित है, 'रानी भाभी, पानी पिला; पानी देवर के कुत्तों को!'

प्यासा देवर भाभी से कहता है, मेरी रानी भाभी, दो गूँट पानी पिला दो। रानी के विशेषण में जो नम्रता है, अपनी अपेक्षा दूसरे को महत्त्व देने की जो वृत्ति है, उसने भाभी का मन पुलकित कर दिया और उसकी उदारता को, ममता को जगा दिया है।

वह कहती है, अरे देवरजी पानी का क्या पिलाना, पानी तो मैं लाड़ले देवर के कुत्तों के लिए भी स्वयं कुएँ से भर-खींच लाऊँ; देवरजी, तुम तो कुछ और पियो-दूध, लस्सी, शिकंजी, शरबत!

माँगा था पानी, मिला चभता ताना और माँगा था पानी पर मिल रहा है दूध-शरबत। झुकने और अकड़ने का यह चमत्कार है।

ओह, याद आ गए बुजुर्ग दोस्त कुंदनलाल। मेरी ही जन्मभूमि में सुनार का काम करते थे। बड़े ही दिलचस्प आदमी थे। जब हम उनकी दुकान पर पहुँचते थे सोने-चाँदी का कोई जेवर बनाते होते और हम कहते, "कहिए क्या बना रहे हैं भाई साहब ? वे अपना हथौड़ा रोक देते और राजा टोडरमल के समय का अपना चश्मा नाक से माथे पर रखते हुए कहते, अजीब सवाल है कि आज मैं क्या बना रहा हूँ ? अरे भाई, किसी की बनती है नथ, किसी की अँगूठी, किसी का हार और किसी का कंगन, पर अपनी तो मैं दाल-रोटी ही बनाता हूँ, क्या आज, क्या कल और क्या परसों।" और तब ऐसी मीठी हँसी हँसते कि उस बुढ़ापे में भी उनका खुबानी चेहरा कंधारी अनार हो जाता!

अपनी ठुक-ठुक के बीच उन्होंने उर्दू में कुछ कविताएँ भी लिखी थीं। एक शेर याद आ गया है पर याद धोखा दे गई, शेर कहाँ, शेर का भाव ही बस कि सुराही बहुत कीमती है, उसमें शराब भी बहुत कीमती है और वह साकी के बहुत कीमती हाथों में भी है-बेशक, वह महत्त्व तो उस मानूली प्याले का है, जो उस सुराही को सिर झुकाकर शराब देने के लिए विवश कर देता है।

वही बात कि देने से बढ़कर लेने वाले की पात्रता है। लो, स्मृति के आसन पर आ बैठे हैं पूज्य मदनमोहनजी मालवीय, जिन पर सदा धन बरसा। उस बार काशी विश्वविद्यालय में उनके दर्शन करने गया, तो बातों-बातों में उन्होंने कहा था, "देश के हर द्वार पर एक दाता खड़ा है अपनी खुली थैली लिए, पर कमी उन होथों की है, जिनमें वह अपनी भेंट दे सके !"

मेरे उठते-उठते, आग्रह से कहा था उन्होंने, "भूलना मत इसे।"

और मुंबई मेल के उस थर्ड क्लास कंपार्टमेंट में उस दिन पूज्य मालवीयाजी के संदेश का परीक्षण कितना सफल रहा था:

मेल का हर डिब्बा करीब-करीब 'एयरटाइट' था, बस खाली था एक डिब्बा पर इसमें चढ़ना शेर की दाढ़ से गोश्त

निकालना था। स्टेशन के आते ही उसकी बंद खिड़की से एक रोबीले पेशावरी पठान का चेहरा बाहर निकल आया। खिड़की के बाहर हम सात मुसाफिर थे। खान और फौजी उस युग के शेर-साँप थे; उन्हें लाँघना कठिन क्या, असंभव ही था। खान ने मुसाफिरों को देखा और पूरे रोब से कहा,"खिड़की नहीं खुलेगा।"

हम सबने समझ लिया कि ठीक ही है यह कि खिड़की नहीं खुलेगा, तो हम सात मुसाफिरों में से पाँच तो उसी क्षण दूसरे डिब्बे की ओर भाग निकले। छठे ने सामने से आते चैकर से शिकायत की,"जनाब, ये हजरत पूरा डिब्बा घेरे बैठे हैं और हमें चढ़ने नहीं देते।" चैकर महोदय ने अपने नए यूनीफोर्म के रोब में जरा डाँट के स्वर में खान से कहा, "आप दूसरे मुसाफिरों को चढ़ने से नहीं रोक सकते, खोलिए, खिड़की।" खान ने सचमुच खिड़की खोल दी और चैकर की ओर मुसकराते हुए कहा "ओ: तुम बौठाएगा इशको ? बौठाओ। जब गाड़ी चलेगा और हम इस शाला को बाहर फेंकेगा, तो तुम शाला झंडी हिलाना।" चैकर तो खिसका ही, वे मुसाफिर महाशय भी नौ-दो-ग्यारह हुए। खान ने उन्हें आवाज देकर कहा, "ओ: कहाँ जाता है ? आवो ईढर, हम पूरी शीट देगा।" निमंत्रण काफी उदार था पर उसे स्वीकार करने की शक्ति उन महाशय में न थी। वे चले, तो चले ही गए। खान ने अपनी खिड़की धम-से बंद कर ली।

मैं अब भी अपनी जगह खड़ा था, "अपनी अटैची हाथ में लटकाए। खान ने मुझे देखा मैंने खान को। उसने क्या सोचा मैं नहीं जानता, पर मैंने सोचा, मालवीयजी महाराज का वचन है कि हर द्वार पर एक दाता खड़ा है, तो क्या वह खान भी दाता है ?"

तभी खान ने मुझसे कहा, "तुम नहीं गया ?"

मैंने संक्षेप में कहा, "नहीं खान साहब !"

"क्यों, गाड़ी में नहीं चड़ेगा ?"

"चढूँगा, अगर आप प्यार से चढ़ाएंगे।"

"क्यों ? दूसरे डब्बे में नहीं चड़ेगा ?"

"खान साहब, आप एक बहादुर पठान है और बहादुर आदमी का दिल बहुत बड़ा होता है। उसमें ही जगह न मिले, तो फिर कहाँ जगह मिलेगी ?"

"तुम डरता नहीं, हम तुम्हें नीचे फेंक देगा ?" "नहीं खान साहब, बहादुर आदमी के पंजे सख्त होते हैं दिल मुलायम होता है। आप मुझे नीचे नहीं फेंक सकते।"

खान ने कुछ सोचा कि तभी गार्ड की सीटी बजी और हरी झंडी हिली। खान ने दरवाजा खोला और मुझे बुलाया। मैं झपट कर दरवाजे पर पहुँचा कि खान ने सहारा देकर मुझे भीतर ले लिया।

अठारह आदमियों के बैठने लायक उस छोटे-से डिब्बे में खान था, उसकी खूबसूरत बीवी थी और दो बच्चे थे। सबके बिस्तर बिछे थे; जैसे वे पलंग पर ही हों। मैंने खान की बीवी को सलाम किया और खान को धन्यवाद दे, दूसरी तरफ बैठ गया। कुछ देर बाद धीरे-से खान मेरे पास आया और उसने मुझे दो बहुत बढ़िया सेव दिए। खाकर मजा आ गया और मैंने सोचा, "मालवीयजी महाराज का वचन सत्य है कि देश के हर द्वार पर एक दाता खड़ा है, अपनी खुली थैली लिए, पर कमी उन हाथों की है,जिनमें वह अपनी भेंट दे सके।"

सचमुच यह खान, ज़िसे हम सात मुसाफिरों ने यमदूत या जीता भूत समझा था, एक दाता ही तो था और उसकी प्यार भरी भेंट मेरे हाथों में थी, पर मेरी सनक देखिए कि मैं अब अपने दाता की कसकर परीक्षा लेने पर तुल गया था।

दूसरे स्टेशन पर गाड़ी आकर रुकी तो समय की बात, स्टेशन मेरी तरफ था। खान की तरह मैं खड़की से बाहर झुक गया। तीन मुसाफिर थे-दो जवान एक बूढ़ा। बिना खान की तरफ देखे , जोर से मैंने कहा, "बूढ़े बाबा, यह खान साहब का डिब्बा है। उन्होंने मुझे मेहरबानी करके बैठने की जगह दे दी है। वह जगह मैं तुम्हें दे दूँगा और खुद खड़ा रहूँगा। तुम भीतर आ जाओ।" और बिना क्षण-भर रुके, मैंने उन दोनों जवानों से कहा, "तुम्हारे लिए दरवाजा नहीं खुलेगा, तुम कहीं और चले जाओ।"

तुरंत वे दोनों चले गए और मैंने बूढ़े को भीतर ले अपनी जगह बैठा दिया। मैं कुछ देर तो खिड़की पर झुका रहा और फिर दीवार से लगकर खड़ा-खड़ा अपनी पुस्तक पढ़ने लगा। कोई बीस मिनट बाद खान ने पूछा, "तुम क्यों खड़ा है मेरे भाई ?" सरलता से मैंने कहा, "खान साहब, आपने मेहरबानी करके जो जगह मुझे दी थी, वह मैंने बूढ़े बाबा को दे दी, लेकिन मुझे कोई दिक्कत नहीं है, आप आराम से लेटिए।" खान ने बिना अपनी गंभीरता भंग किए कहा, "नहीं तुम भी बैठो।" खान को धन्यवाद देकर मैं बैठ गया दूसरे स्टेशन पर गाड़ी ठहरी तो मैंने एक स्त्री और उसके बालक को अपनी जगह बिठा दिया और खड़ा हो गया। कुछ देर बाद खान की बीवी ने खान के कान में कुछ कहा और खान ने मुझे फिर बैठा दिया।

और दोपहर भर गई थी। सोने के लिए करवट लेते-लेते खान ने मुझ से कहा, "तुम चाएगा तो किसी को बैठाएगा पर तुम जरूर बैठेगा, हम सोता है।" और खान जब सोकर उठा तो हम बारह थे। खान देख कर हँसा और बोला, " सरकार तुम को रोज बोम्बे मेल में रखे तो बौत मुसाफिर को आराम होगा।" मैंने कहा, "पर खान साहब, आपको भी मेरे साथ रहना पड़ेगा; नहीं

तो मुझे खाली डिब्बा कहाँ मिलेगा!" खान और उसकी पत्नी इतने जोर से हँसे कि मजा आ गया।
शाम को सात बजे मैं अपने स्टेशन पर उतरा तो खान ने मुझसे हाथ मिलाया और उसकी बीवी ने मुझसे पहले मुझे सलाम किया।

खान की सख्ती क्यों छूमेतर हो गई थी ?
खान देने को क्यों उतावला हो उठा था ?
मेरी सफलता का रहस्य क्या था ?
धूपबत्ती तीन दियासलाइयों में क्यों न जली ?
चौथी दियासलाई के छूते ही क्यों जल उठी ?

देख रहा हूँ, "धूपबत्ती झमझम जल रही है और मेरी कोठरी उसकी भीनी सुगंध से भरी है। सोच रहा हूँ," यह पहली दियासलाई में जल जाती तो यह बात और बात में छिपी बात मैं कैसे पाता ?

शब्दार्थ और टिप्पणी

धूपबत्ती अगरबत्ती **भभक उठना** तेजी से जल उठना **ऊहापोह** उलझन **पात** पत्ता **दंडवत** डंडे की तरह जमीन पर गिरकर प्रणाम करना **शीतला** चेचक **पतित** नीच,गिरा हुआ **पुलकित** प्रसन्न **हज़रत** मान्यवर, महोदय

मुहावरे

छूमंतर हो जाना गायब हो जाना **शेर की दाढ़ से गोश्त निकालना** असंभव काम करना **नौ-दो ग्यारह होना** भाग जाना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) अपनी कोठरी में आते ही लेखक ने क्या देखा ?
(2) सिर-जली धूपबत्ती लेखक को किस तरह के मनुष्य जैसी लगी ?
(3) धूप-बत्ती तीन दियासलाइयों से क्यों न जली ?
(4) चौथी दियासलाई के छूते ही धूपबत्ती क्यों जल उठी ?
(5) 'विद्या ददाति विनंय...' वाले श्लोक का अर्थ बताइए।
(6) लेखक से मालवीयाजी ने क्या कहा ?
(7) लेखक को ट्रेन से बाहर रोकने में पठान यात्री क्यों असमर्थ रहा ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) चौथीबार धूप-बत्ती के जलने के प्रसंग से लेखक ने क्या सिद्ध किया है ?
(2) कुंदनलाल के विषय में संक्षेप में लिखिए।
(3) 'मुंबई मेल के डिब्बे में चढ़ना शेर की दाढ़ से गोश्त निकालने जैसा था' समझाइए।
(4) रानी भाभी के संबोधन का क्या प्रभाव पड़ा ?
(5) पठान के हृदय-परिवर्तन के प्रसंग को विस्तार से लिखिए।
(6) विनम्रता के महत्त्व को समझने के लिए लेखक ने जो उदाहरण दिए हैं, उनमें से किसी एक को अपने शब्दों में लिखिए।?

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) "हाँ इन बोलों दूध के कटोरे! अरे देवरजी, तुम्हारे बोल इतने मीठे हैं कि मैं तुम्हें पानी नहीं, दूध पिलाऊँगी; मुँह धोए रहो!"
(2) "देश के हर द्वार पर एक दाता खड़ा है अपनी खुली थैली लिए, पर कमी उन हाथों की है, जिनमें वह अपनी भेंट दे सके।"

4. नीचे दिये हुए मुहावरों से वाक्य बनाइए :

नौ दो ग्यारह होना, उफनते फिरना, मुँह धोए रहना

योग्यता- विस्तार

- 'विनम्रता का महत्त्व' विषय पर समूह चर्चा का आयोजन कीजिए।

●

हिन्दी के विविध रूप

हमारा देश भारत एक बहुभाषी देश है। यहाँ अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती हैं। गुजराती, बंगला,उड़िया, असमिया, हिन्दी, पंजाबी, सिंधी, तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम आदि अनेक भाषाएँ विभिन्न प्रदेशों में बोली जाती हैं। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जो देश के एक बड़े भू-भाग में बोली जाती है। इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है जिसे हम हिन्दी भाषी प्रदेश कहते हैं। इन प्रदेशों में उत्तरांचल, हिमाचल, दिल्ली-हरियाणा, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार तता झारखंड का समावेश होता है। यहाँ के लोग अपने-अपने घरों में दैनिक व्यवहार में अपनी-अपनी बोलियाँ बोलते हैं और औपचारिक रूप में हिन्दी का प्रयोग करते हैं। हिन्दी में कुल 18 बोलियाँ हैं, जो अपने-अपने क्षेत्र के लोगों की मातृभाषा कहलाती हैं। जैसे कि ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, हरियाणवी, मारवाडी, मेवाती, बुंदेली, गढ़वाली आदि। बोलियों का क्षेत्र सीमित होता है और भाषा का विस्तृत। एक भाषा में कई बोलियाँ होती हैं।

1. व्यावहारिक हिन्दी : स्वरूप और क्षेत्र

भाषा का मुख्य प्रयोजन है- संप्रेषण । अर्थात् अपनी बात को दूसरों तक सार्थक रूप से पहुँचाना। बहुभाषी देश होने के कारण संप्रेषण-व्यवस्था में कठिनाइयाँ आने की संभावना बनी रहती है। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए एक ऐसी भाषा की अपेक्षा रहती है, जो समूचे देश को एक सूत्र में बाँध सके, वह एक संपर्क-भाषा की भूमिका निभा सके। क्षेत्रीयता से परे राष्ट्रीय स्तर पर इस भाषा का विशेष, दायित्व रहता है। सार्वदेशिक स्तर पर जीवन एवं समाज के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े होने के कारण इस भाषा से अनेक प्रयोजन सिद्ध होते हैं। इसी संदर्भ में हिन्दी भारत की संपर्कभाषा के रूप में जीवन के विभिन्न व्यवहार-क्षेत्रों में कार्य कर रही है। शिक्षा और विज्ञान के बहुमुखी प्रचार-प्रसार के साथ-साथ व्यावसायिक, वाणिज्यिक, औद्योगिक आदि नये-नये कार्यक्षेत्र उभर रहे हैं, जिनमें हिन्दी का प्रयोग दिन-दिन बढ़ रहा है। हिन्दी का प्रयोग पहले साहित्य तक सीमित था किंतु अब इसने अपनी साहित्यिक सीमा को लाँघ कर जीवन और जगत के अनेकानेक क्षेत्रों में प्रवेश कर लिया है। जीवन के विविध विषयों, कार्यकलापों का माध्यम बनकर इसने एक **व्यावहारिक रूप** धारण कर लिया है। यह व्यावहारिक रूप ही उसकी शक्ति बन गया है। इस प्रकार वर्तमान जीवन और जगत की विभिन्न आवश्यकताओं के निर्वाह के लिए जिस हिन्दी का प्रयोग हो रहा है, वह **व्यावहारिक हिन्दी** ही है।

हिन्दी भारत की राजभाषा-राष्ट्रभाषा होने के कारण अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी का व्यवहार-क्षेत्र सामाजिक, साहित्यिक, शैक्षिक, वाणिज्यिक, वैज्ञानिक, प्रशासनिक आदि अनेक कार्य-क्षेत्रों तक फैला हुआ है। इनमें से सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और साहित्यिक क्षेत्रों की भाषा प्राय: **जनभाषा** के अधिक निकट होती है। जब कि वैज्ञानिक, वाणिज्यिक, प्रसासनिक आदि कार्य-क्षेत्रों की भाषा **तकनीकी** भाषा के अधिक निकट होती है। इस दृष्टि से हिन्दी के प्राय: दो रूप दिखाई देते हैं (1) जनव्यवहार के क्षेत्रों की हिन्दी (2) प्रयोजन परक कार्यक्षेत्रों की हिन्दी। ये दोनों रूप व्यावहारिक हिन्दी के अंतर्गत आते हैं।

(1) जनव्यवहार के क्षेत्रों की हिन्दी

सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों तथा अन्य व्यावहारिक क्षेत्रों में हिन्दी का जो प्रयोग होता है उसके अपने अलग-अलग रूप होते हैं; जैसे--

(क) कार्यालय में काम करते समय अपने अधिकारियों, कर्मचारियों और सामान्य जनता से बातचीत या संवाद करना।

(ख) सभा-समारोह आदि का संचालन करना।

(ग) किसी सूचना की उद्घोषणा करना।

(ध) किसी मैच या घटना का आँखों-देखा हाल बताना।

(ङ) समाचार लिखना या देना। (अखबार, रेड़ियो, दूरदर्शन)

(च) औपचारिक संदर्भों में किसी मामले की शिकायत करने या समस्या के निराकरण के लिए बस, रेल्वे, टेलीफोन, बैंक आदि से संबंधित कार्यालयों से पत्र-व्यवहार करना।

इस प्रकार की हिन्दी के मौखिक और लिखित दोनों रूप प्राप्त होते हैं। इसकी शैली औपचारिक-अनौपचारिक दोनों प्रकार की हो सकती है।

(2) प्रयोजन परक कार्यक्षेत्रों की हिन्दी

किसी भी देश के शासन संबंधी कार्यों के लिए स्वीकृत भाषा उस देश की राजभाषा कहलाती है। अत: राजभाषा के रूप में हिन्दी कुछ विशिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होती है। हिन्दी के इस रूप को **प्रयोजनमूलक** हिन्दी के रूप में जाना जाता है। 'प्रयोजनमूलक' शब्द दो शब्दों के योग से बना है। 'प्रयोजन' विशेषता है जिसमें 'मूलक' प्रत्यय जोड़कर प्रयोजनमूलक बना है। 'प्रयोजन' का अर्थ है उद्देश्य तथा 'मूलक' का अर्थ है आधारित। इसप्रकार प्रयोजनमूलक हिन्दी से तात्पर्य हुआ-'किसी निश्चित उद्देश्य पर आधारित हिन्दी या किसी निश्चित उद्देश्य को केन्द्र में रखकर प्रयुक्त की जाने वाली हिन्दी।'

प्रयोजनमूलक हिन्दी की **प्रयुक्तियों** के अंतर्गत- कार्यालय की हिन्दी, विज्ञान और वाणिज्यिक हिन्दी, तकनीकी हिन्दी एवं जनसंचारी हिन्दी का समावेश किया जा सकता है। अब तो कम्प्यूटर में भी हिन्दी का प्रयोग होने लगा है। इन सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाली हिन्दी विशिष्ट प्रयोजन की हिन्दी होती है। इस हिन्दी का प्रयोग सामान्यत: अपने-अपने कार्यक्षेत्र या विषय से संबद्ध व्यक्ति आपस नें करते हैं। इस हिन्दी की अपनी अलग शब्दावली और संरचना होती है। यह भाषा मुख्यत: एकार्थी और अलंकार मुक्त होती है। इस में लक्षणा और व्यंजना के लिए कोई स्थान नहीं होता। यह एक प्रकार की व्यावसायिक शैली होती है जो अपने विषय एवं क्षेत्र के अनुरूप एक स्पष्ट एवं सुनिश्चित विधि के रूप में प्रयुक्त होती है। यह हिन्दी प्राय: तकनीकी और लिखित होती है और अधिकांशत: औपचारिक शैली में लिखी जाती है। इस व्यावसायिक शैली को **प्रयुक्ति** की संज्ञा दी गई है।

इसप्रकार प्रयोजन मूलक हिन्दी का एक निश्चित स्वरूप और व्यवस्था है। इसके अंतर्गत **कार्यालय-पत्राचार** का भी समावेश होता हे। ऐसे पत्राचार के अनेक रूप हैं; जैसे- सरकारी पत्र, सरकारी आदेश, कार्यालय आदेश, कार्यालय ज्ञापन, परिपत्र आदि। पत्रों में तीन प्रकार के पत्र होते हैं: सरकारी पत्र, गैर सरकारी पत्र एवं स्मरण पत्र। आदेश दो तरह के होते हैं: सरकारी आदेश और कार्यालय आदेश। इनके अतिरिक्त ज्ञापन, टिप्पण-लेखन, परिपत्र, अधिसूचना प्रेस-विज्ञप्ति आदि का भी इसी में समावेश होता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि **व्यावहारिक हिन्दी** अपने आप में एक व्यापक अवधारणा है जो सामाजिक जीवन तथा तकनीकी क्षेत्रों की अभिव्यक्ति के रूप में प्रयुक्त होती है। कुछ विद्वान इसे प्रयोजनमूलक हिन्दी अथवा कामकाजी हिन्दी के पर्याय के रूप में मानते हैं किंतु ये दोनों ही रूप व्यावहारिक हिन्दी के भीतर समाहित हैं।

जनसंचारी हिन्दी :

विज्ञान, वाणिज्य, कार्यालयों आदि में प्रयुक्त हिन्दी के साथ-साथ अब जनसंचार के नवीनतम् माध्यमों द्वारा हिन्दी का सर्वाधिक प्रयोग हो रहा है। जो अत्यंत जीवंत है। मुद्रण कला के विकास से समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, पोस्टर, पैम्पलेट, विज्ञापन के नये-नये तौर तरीके सामने आ रहे हैं। इसी प्रकार दृश्य-श्राव्य माध्यमों के रूप में रेडियो, टेलीफोन, मोबाइल, टेलिविज़न, फिल्म, कम्प्यूटर, फेक्स, ई-मेल, वॉट्सअप आदि द्वारा विविध प्रयोजनों के तहत हिन्दी का व्यापक प्रयोग हो रहा है। तत्काल संप्रेषण इसकी प्रमुख विशेषता है। आज अनेक नये-नये क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग के द्वार खुले हैं। इन सभी क्षेत्रों में प्रयोजन मूलक हिन्दी को गढ़ने का कार्य चल रहा है। प्रयोजन मूलक हिन्दी का यह नया रूप बहुत शक्तिशाली बनता जा रहा है।

मानक हिन्दी :

हिन्दी भारत के एक बड़े भू-भाग में बोली जानेवाली भाषा है। कई उपभाषाओं और बोलियों के कारण हिन्दी के विविध रूप देखने सुनने को मिलते हैं। एक ओर जनपदीय हिन्दी है तो दूसरी ओर संस्कृतनिष्ठ हिन्दी है। कहीं उर्दू-मिश्रित हिन्दी प्रयुक्त होती है तो कहीं अंग्रेजी से प्रभावित। प्रयोजन की दृष्टि से भी उसका कार्यक्षेत्र दिन-दिन व्यापक होता जा रहा है। इन तमाम विविधताओं के बावजूद उसका **मानकरूप** (सर्व सामान्य रूप) होना अत्यंत आवश्यक है; जिससे भाषा-प्रयोग में अराजकता न पैदा हो जाए, भाषा की बोधगम्यता बराबर बनी रहे, एक रूपता बनी रहे। जिससे भाषिक संप्रेषण सर्वमान्य और सर्वग्राह्य बना रहे। शब्दों के उच्चारण एवं वर्तनी के विविध रूपों में से किसी एक रूप को मानक मान लिया जाता है। इससे भाषा के प्रयोग में स्थिरता एवं एकरूपता आती है। इस तरह उच्चारण, वर्तनी, शब्द-भंडार आदि व्याकरणिक स्तरों पर मानक रूप में ऐसी एकरूपता आ जाती है जिससे भाषा सभी के लिए सुबोध हो जाए। भाषा के मानक रूप के ज्ञान से उसके शद्ध-अशुद्ध रूपों को जाँचने-परखने में भी सरलता रहती है। हिन्दी भाषा का यही रूप मानक हिन्दी कहलाता है। मानक हिन्दी खड़ीबोली के लिए देवनागरी लिपि का स्वीकार किया गया है।

हिन्दी : संपर्क भाषा : हिंदी, राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में

संपर्क भाषा : हिन्दी

भाषा पारस्परिक संपर्क का सर्वाधिक सशक्त माध्यम है। इस माध्यम से देश के विभिन्न प्रदेश के लोग, विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले लोग वैचारिक आदान-प्रदान कर संपर्क स्थापित कर सकते हैं। हिन्दी भाषा संपर्क का एक सशक्त माध्यम बनने में सफल हुई है। हमारा देश बहुभाषी देश है। यहाँ उत्तर से दक्षिण, पूरब से पश्चिम कई भाषाएँ बोली जाती हैं। हिन्दी तो बहुत पहले से देश के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच संपर्क-भाषा की भूमिका निभाती आई है। मध्यकाल में भक्ति-आंदोलन ने पूरे देश को भावात्मक एकता के सूत्र में बाँध दिया था। इस दौर में हिन्दी ही वह माध्यम थी जिसने संतों-भक्तों की वाणी को देश के कोने-कोने तक पहुँचा दिया था।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी हिन्दी ही संपूर्ण देशवासियों के बीच संपर्क का सशक्त माध्यम बन कर उभरी थी। आधुनिक काल में संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। विश्व के ज्ञान-विज्ञान तथा साहित्य को, भारतीय भाषाओं की श्रेष्ठ रचनाओं को सर्वसुलभ बनाने के लिए हिन्दी एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरी है।

आज ज्ञान-विज्ञान के विस्फोट का युग है। इसे जन-जन तक पहुँचाने के लिए जन-संपर्क की भाषा की सख्त जरूरत है। पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो, दूरदर्शन, फिल्मों, डॉक्यूमेन्टरी आदि ने संपर्क माध्यम के रूप में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में बड़ा योगदान किया है। संविधान में स्थान मिलने के कारण, लोकतांत्रिक व्यवस्था में व्यापक प्रयोग होने के कारण तथा सरकार के त्रिभाषा फार्मूले के कारण हिन्दी भारत की संपर्क भाषा के रूप में खूब विकसित हुई है। प्रवासन की बढ़ोतरी के कारण संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग दिन-दिन बढ़ रहा है।

राष्ट्रभाषा : हिन्दी

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होती है जो संपूर्ण राष्ट्र को एकता-अखण्डता के एक सूत्र में बाँधकर रखती है। गाँधीजी ने कहा था- 'राष्ट्रभाषा के बिना कोई भी देश गूँगा होता है।' स्वतंत्रता संग्राम के दौरान संपूर्ण देश को राष्ट्रीय भावना के सूत्र में बांधने का काम हिन्दी ने किया। इसकी सार्वदेशिकता और व्यापक प्रचार-प्रसार के कारण इसे राष्ट्रभाषा का गौरव सहज ही मिल गया। गाँधीजी ने हिन्दी के 'हिन्दुस्तानी' रूप पर बल देते हुए उसे राष्ट्रभाषा घोषित किया। स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े हर प्रदेश के महापुरुषों ने बिना किसी विरोध के हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया। इस दौरान हिन्दी केवल हिन्दी भाषी प्रदेश की भाषा न रहकर, सारे देश की अभिव्यक्ति का माध्यम बन गई और उसे राष्ट्रभाषा की पहचान मिल गई। भले ही संविधान में हिन्दी को 'राजभाषा' के रूप में स्वीकार किया गया है फिर भी उसे राष्ट्रभाषा का विशिष्ट गौरव प्राप्त है। यह हमारे बहुभाषी देश को जोड़ने वाली मजबूत कड़ी है, देश की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति का माध्यम है।

राजभाषा : हिन्दी

किसी भी देश के राजकाज (प्रशासनिक कार्य)के लिए संवैधानिक रूप से स्वीकृत भाषा 'राजभाषा' कहलाती है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद सारे देश के प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए एक सामान्य प्रशासनिक भाषा की आवश्यकता पड़ी जो अंग्रेजी का स्थान ले सके। काफी सोच-विचार के बाद 14 सितंबर 1949 को भारत की **संविधान सभा** ने हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लिया। संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए अंतर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग होगा। संघ के संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे।

भारत के कई राज्यों-उत्तरप्रदेश, उत्तराँचल, बिहार, झारखंड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, और दिल्ली में हिन्दी राजभाषा के रूप में स्वीकृत है। अंडमान में भी उसे राजभा,ा के रूप में मान्यता मिल गई है। साथ ही देश के कई राज्यों में हिन्दी द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में पढ़ाई जा रही है। संविधान में यह भी व्यवस्था की गई है कि जिन प्रदेशों ने हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार नहीं किया है वे 'सह राजभाषा' के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग कर सकते हैं। उल्लेखनीय है कि 1963 के राजभाषा अधिनियम और बाद में 1967 के संशोधित अधिनियम के अनुसार 26 जनवरी 1965 से अंग्रेजी को तब तक सहराजभाषा के रूप में जारी रखने का प्रावधान किया गया है, जब तक अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त करने के लिए उन राज्यों के विधान मंडल संकल्प पारित नहीं करते।

सरकारी और निजी क्षेत्र के कार्यालयों से संबंधित पत्राचार

कार्यालय पत्राचार से तात्पर्य है उस पत्राचार से जो किसी सरकारी/अर्ध सरकारी संस्था या कार्यालय में विविध प्रकार की प्रशासनिक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए किया जाता है। इस पत्राचार में भावों की जगह तथ्यों को महत्त्व दिया जाता है। कार्यालयों में होने वाले पत्रों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है- (1) सरकारी पत्र (2) अर्ध सरकारी पत्र (3) स्मरण पत्र

(1) सरकारी पत्र का नमूना

आपके विद्यालय के तृतीय वर्ग (श्रेणी) के कर्मचारी राजेन्द्रप्रसाद ने बीमारी के कारण अपनी छुट्टी बढ़ाते हुए चिकित्सा-प्रमाणपत्र भेजा है। इस संदर्भ में चिकित्सा-अधीक्षक के पत्र भेजने के लिए प्रारूप का नमूना-

सं.1/52/265 शि.
शिक्षा निदेशालय
राष्ट्रीय राजधानीक्षेत्र, दिल्ली सरकार,
दिल्ली सचिवालय
इन्द्रप्रस्थ मार्ग, दिल्ली
दि. 10 जुलाई 2015

सेवा में,
चिकित्सा अधीक्षक
अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान
श्री अरविंद मार्ग
नई दिल्ली-110016

विषय : श्री राजेन्द्रप्रसाद के स्वास्थ्य-परीक्षण के विषय में।

महोदय,

मुझे यह बताने का निर्देश हुआ है कि इस निदेशालय के अतर्गत आने वाले 'माध्यमिक विद्यालय' मयूर विहार, नई दिल्ली के तृतीय श्रेणी के कर्मचारी श्री राजेन्द्रप्रसाद 20 जून 2015 से अवकाश पर हैं। उन्होंने एक निजी चिकित्सक का चिकित्सा-प्रमाणपत्र भेजा है। जिसमें 10 अगस्त 2015 तक अवकाश बढ़ाने की सिफारिश की है। आपसे अनुरोध है कि आप उनके स्वास्थ्य की परीक्षा कर अपनी राय इस निदेशालय को शीघ्र भेजने की कृपा करें। श्री राजेन्द्रप्रसाद द्वारा प्रस्तुत किया गया चिकित्सा-प्रमाणपत्र संलग्न है।

भवदीय,
हस्ताक्षर.......
(अरविंद शर्मा)
शिक्षाधिकारी
संलग्नक : (श्री राजेन्द्रप्रसाद का चिकित्सा-प्रमाणपत्र)

(2) अर्धसरकारी पत्र

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय से अपेक्षित सूचनाएँ मँगवाने के लिए पत्र भेजा जा चुका है, लेकिन अभी तक कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है। इस संदर्भ में अर्धसरकारी पत्र का नमूना-

अ.स.स.से.....
भारत सरकार
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
विश्वविद्यालय विभाग
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
दिनांक : 15 दिसंबर 2015

श्री वीरेन्द्र ठाकुर
सचिव
दूरभाष : 3332556

प्रिय श्री मनीष बंसल

इस कार्यालय के समसंख्यक पत्र दि. 25 जुलाई, 2015 तथा 26 अगस्त, 2015 द्वारा आपके कार्यालय से कुछ आवश्यक सूचनाएँ माँगी गई थीं जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई हैं। अत: आपसे निवेदन है कि आप इस संदर्भ में व्यक्तिगत रुचि लेकर जरूरी सूचनाएँ शीघ्र भिजवाने की कृपा करें।

आपका,
हस्ताक्षर......
(वीरेन्द्र ठाकुर)
श्री मनीष बंसल,
सहायक निदेशक,
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय,
रामकृष्ण पुरम् , नई दिल्ली।

(3) स्मरण पत्र : (अनुस्मारक)

भारत सरकार
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(उच्च शिक्षा विभाग)
शास्त्रीभवन
नई दिल्ली-110001
दिनांक : 25 सितंबर, 2015

सेवा में,
कुल सचिव,
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
आगरा - 282005

विषय : तृतीय श्रेणी के कर्मचारियों से संबंधित संख्या।

महोदय,

उक्त संदर्भ में इस कार्यालय से समसंख्यक पत्र दि. 25 जुलाई, 2015 का अवलोकन करें। (पूर्व प्रेषित पत्र की फोटो-प्रति संलग्न है।)

आपके विभाग से इस संबंध में आज तक संख्या प्राप्त नहीं हो सकी है। कृपया अति शीघ्र संख्या भेजने का कष्ट करें ताकि उसे प्रबंधन-समिति की बैठक में प्रस्तुत किया जा सके।

भवदीय,
हस्ताक्षर.....
(कमल किशोर)
उपसचिव, भारत सरकार।

कार्यसूची और कार्यवृत

कार्यसूची

संस्थाओं और कार्यालयों में किसी विषय या समस्या पर गंभीरता से विचार विनिमय करने के लिए सिमतियों का गठन होता है। इन समितियों में कई सदस्य होते हैं, जिनमें एक अध्यक्ष और एक सचिव होता है। समिति की बैठक सचिव आयोजित करता है। बैठक की कार्यवाई शुरू होने से पूर्व अध्यक्ष या सचिव सदस्यों का स्वागत करता है और पिर विचारमीय विषयों का संक्षिप्त परिचय देता है।

बैठक प्रारंभ होने से पूर्व एक 'कार्यसूची' तैयार की जाती है; जिसमें विचारणीय विषयों को लिखा जाता है। कार्यसूची तैयार होने के बाद बैठक की निर्धारित तारीख से पहले सदस्यों को भेज दी जाती हैं, जिस से बैठक के दौरान मुद्दों पर गंभीरता से चर्चा हो सके।

कार्यसूची का प्रारूप

कर्णावती विद्यालय अमराईवाडी, अहमदाबाद की सांस्कृतिक समिति की होनेवाली बैठक के लिए कार्यसूची बनाने का नमूना–

कर्णावती विद्यालय, अमराईवाडी, अहमदाबाद,
सांस्कृतिक समिति की बैठक–2 दिसंबर, 2015

कार्यसूची

(1) सदस्यों का स्वागत।
(2) पिछली बैठक के कार्यवृत्त की संपुष्टि।
(3) सांस्कृतिक कार्यक्रम की तारीख निश्चित करना।
(4) सांस्कृतिक कार्यक्रम की कार्य योजना पर विचार।
(5) कार्यक्रम की कार्य योजना पर विचार।
(6) अध्यक्ष महोदय की अनुमति से अन्य विषय।
(7) फधन्यवाद ज्ञापन।

हस्ताक्षर–
सचिव, सांस्कृतिक कार्यक्रम

कार्यवृत्त

किसी भी बैठक की समाप्ति का बाद सचिव कार्रवाई के लिए कार्यवृत्त का प्रारूप तैयार करता है। बैठक में जो प्रस्ताव और निर्णय लिए गए थे, उनका विवरण कार्यवृत्त में दिया जाता है। अध्यक्ष के हस्ताक्षर के पश्चात् कार्यवृत्त तो अगली बैठक में संपुष्टि के लिए प्रस्तुत किया जाता है। बैठक की संभावना न होने पर उसकी एक–एक प्रति समिति के सगस्यों को बेज दी जाती है।

कार्यवृत्त का प्रारूप

सांस्कृतिक समिति की बैठक 2 दिसंबर 2015 को संपन्न हुई थी। उसमें जो निर्णय लिए गए थे, उसके कार्यवृत्त का नमूना–

कर्णावती विद्यालय अमराईवाडी, अहमदाबाद

2 दिसंबर 2015 को संपन्न सांस्कृतिक समिति की बैठक का कार्यवृत्त

सांस्कृतिक समिति की बैठक 2 दिसंबर 2015 को शाम 5 बजे संपन्न हुई। उसमें निमनलिखित सदस्यों ने भाग लिया–

(1) ....अध्यक्ष (2) ....सदस्य
(3) ....सदस्य (4) ....सदस्य
(5) ....सचिव

बैठक प्रारंभ होने से पहले सचिव श्री....................ने सदस्यों का स्वागत किया और 5-8-2015 को संपन्न पिछली बैठक का कार्यवृत्त प्रस्तुत काये, सदस्यों ने जिसकी संपुष्टि सर्व सम्मति से की।

इसके बाद सचिव महादय ने बताया कि 22 से 25 फरवरी 2016 तक विद्यालय में वार्षिक कार्यक्रम रखा गया है। इस बीच एक दिन सांस्कृतिक कार्यक्रम होगा। काफी चर्चा के बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिए सर्व संमति से 23 फरवरी 2016 निर्धारित की गई। सांसकृतिक कार्यक्रम की कार्य योजना पर चर्चा करते हुए सदस्यों ने कई सुझाव दिए। निम्नलिखित सुझाव पारित हुए–

(1) संगीत

(2) गायन और नृत्य

(3) फैशन शो/फौंसी ड्रेस

(4) बाद–विवाद प्रतियोगिता

(5) नाटक प्रतियोगिता

(6) काव्यपाठ प्रतियोगिता

(7) समूहगान

(8) निबंध प्रतियोगिता

कार्यक्रम में होने वाले खर्च के बारे में प्रधानाचार्य महोदय ने बताया कि सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिए वर्ष 2015-2016 के लिए बजर में बीस हजार रुपए का प्रावधान है।

हिन्दी के अध्यापक श्री..................................ने अध्यक्ष की अनुमति से यह बात उठाई कि इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध कलाकार को आमंत्रित किया जाय। काफी चर्चा का बाद अंत में निश्चय किया गया कि प्रसिद्ध गायक श्री................को मुख्य अतिति के रूप में आमंत्रित किया जाए और अध्यक्षता के लिए हमारे जिला शिक्षा अधिकारी महोदय को निमंत्रित किया जाए।

अंत में अध्यक्ष महोदय ने सबी सदस्यों के प्रति आभार प्रक्ट किया।

हस्ताक्षर–	हस्ताक्षर–
अध्यक्ष	सचिव

•

पारिभाषिक शब्दावली

राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने के बाद विभिन्न विषयों और क्षेत्रों में हिन्दी का प्रयोजनपरक प्रयोग बढ़ने लगा है। इसके लिए पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता भी बढ़ने लगी। ज्ञान-विज्ञान और तकनीकी के वहुविध विकास के साथ नई-नई संकल्पनाओं के लिए नये-नये शब्दों का गढ़ना भी जरूरी बन गया है। स्पष्ट और सटीक अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए दैनिक व्यवहार में प्रयुक्त सामान्य शब्दों से काम नहीं चलता। सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त शब्द अनेकार्थी भी हो सकते हैं जबकि पारिभाषिक शब्द एकार्थी होते हैं, एक निश्चित और सटीक अर्थ प्रकट करते हैं। वस्तुत: पारिभाषिक शब्द वह इकाई है जिसका प्रयोग एक निश्चित संदर्भ या निश्चित ज्ञानक्षेत्र में एक निश्चित अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए होता है। आज ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों - विज्ञान, गणित, अर्थशास्त्र, भूगोल, दर्शन, चिकित्सा, वाणिज्य, विधि एवं प्रशासन जैसे क्षेत्रों में हो रहे विकास की वजह से नये-नये पारिभाषिक शब्द गढ़े जा रहे हैं जो विषय-विशेष के संदर्भ में एक निश्चित अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं।

पारिभाषिक शब्द सूची (कुछ चुने हुए शब्दों के उदाहरण)

(अ) व्यवसाय संबंधी पारिभाषिक शब्द :

अनुबंध	:	Agreement
लाभांश	:	Dividend
आयात	:	Import
निर्यात	:	Export
निवेश	:	Investment
अधिभार	:	Surcharge
लागत	:	Cost
शेयर-सूचकांक	:	Sensex
तुलनपत्र	:	Balance Sheet
मुआवजा	:	Compensation

(ख) बैंकों में प्रयोग में आने वाले पारिभाषिक शब्द :

खाता	:	Account
खातावही	:	Ledger
चालू खाता	:	Current Account
मुद्रा	:	Currency
भुगतान आदेश	:	Payorder
नामांकन	:	Nomination
विदेशी मुद्रा	:	Foreign Exchange
जमा	:	Credit
जमाशेष	:	Cash Balance
उधार	:	Debit
सावधिजमा	:	Fixed Deposit
परिसंपत्ति	:	Assets

(ग) प्रशासनिक कार्यों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द :

अधिसूचना	:	Notification
अध्यादेश	:	Ordinance
अनुदान	:	Grant
कार्यसूची	:	Agenda
अनुभाग	:	Section
संशाधन	:	Resources
राजस्व	:	Revenue
निदेशक	:	Director
प्रबंध	:	Management
कार्यवृत्त	:	Minutes

(घ) विज्ञान-विषयक पारिभाषिक शब्द :

तरंग	:	Wave
गुरुत्व	:	Gravity
उपग्रह	:	Setelite
अम्ल	:	Acid
कोशिका	:	Cell
ऊर्जा	:	Energy
उर्वरक	:	Fertilizer
अंतरिक्ष	:	Space

(च) प्रशासनिक अभिव्यक्तियाँ

केवल सूचनार्थ	:	For Information only
आदेशार्थ प्रस्तुत	:	Submitted for orders
पावती भेजें	:	Kindly acknowledge
जरूरी कार्रवाई कर दी गई है	:	Needful has been done
मामला विचाराधीन है	:	Matter is under consideration
मामले की जाँच की जा रही है	:	Matter is under investigation
केवल कार्यालय उपप्रयोग के लिए	:	For office use only
यथाशीघ्र	:	As soon as
विलंब के लिए खेद है	:	Delay regretted
अनिश्चित काल के लिए स्थगित	:	Adjourned sine die
चिकित्सा आधार पर छुट्टी	:	Leave on medical ground
देख लिया, धन्यवाद	:	Seen, thanks
अनुमति दी जाए	:	May be permitted
सादर निवेदन है	:	I have the honour to say
लोक हित में	:	In public interest

•

द्वितीय सत्र

15 मानसरोदक खंड

मलिक मुहम्मद जायसी
(जन्म : सन् 1393 ई; निधन : सन् 1542 ई.)

भक्तिकालीन निर्गुण काव्यधारा की प्रेमाश्रयी शाखा के सूफी संत कवि जायसी का जन्म रायबरेली के जायसनगर में हुआ बतलाया जाता है। बाल्यकाल में ही माता-पिता का निधन हो जाने से ये संतों की संगत में रहने लगे थे। उन्होंने सैयद अशरफ नामक संत को अपना प्रेम-पथ-प्रदर्शक बतलाया है।

जायसी प्रेमाख्यान परंपरा के प्रकवर्तक माने जाते हैं। उनकी रचनाओं में प्रेम के आध्यात्मिक रूप की व्यंजना है। इन्होंने हिन्दू लोककथाओं और लोक संस्कृति को अपनी कविता का आधार बनाकर हिन्दू और इस्लाम धर्म के बीच समन्वय स्थापित करने का उमदा काम किया। काव्यरूप और भाषा की दृष्टि से भारतीय और फारसी परंपरा को निकट लाने का काम किया । जायसी की तीन प्रमुख रचनाएँ हैं 'पद्मावत' (महाकाव्य), 'अखरावट' और 'आखरी कलाम'। 'पदमावत' जायसी की अक्षय कीर्ति का आधार है। इसमें बोलचाल की अवधी भाषा का सुंदर प्रयोग किया गया है। नागमती का विरह-वर्णन 'पद्मावत' की विशिष्ट उपलब्धि है।

प्रस्तुत प्रबंध-खंड 'पद्मावत' से लिया गया है। इसमें महाकाव्य की नायिका पद्मावती और उसकी फूल-सी सखियों की मानसरोवर में स्नान-केलि का वर्णन है। इसी बीच एक सहेली सुझाव देती है कि अब हमें मैके में कुछ ही दिन रहना है अत: जीवन का जितना आनंद उठाना है उठालो। बाद में ससुराल में तरह-तरह की जिम्मेदारी और बंधनों के बीच इस तरह के अवसर शायद न मिलें। काव्यांश के उत्तरार्ध में पद्मावत की अप्रितम सुंदरता का अलंकारिक चित्रण किया गया है। नख-शिख-सौंदर्य वर्णन की दृष्टि से यह अंश बहुत कलात्मक बन पड़ा है।

एक दिवस पून्यौ तिथि आई।मानसरोदक चली नहाई ॥
पदमावति सब सखी बुलाई।जनु फुलवारि सबै चलि आई ॥
खेलत मानसरोवर गई।जाइ पालि पर ठाढ़ी भई॥
देखि सरावर हँसैं कुलेली। पदमावति सौं कहहिं सहेली॥
ऐ रानी ! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी॥
जौ लगि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहु जो खेलहु आजू॥
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवराली॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा॥
सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारुन ससुर न निसरैं देहीं॥
पिउ पियार सिर ऊपर ,सो पुनि करै दहुँ काह।
दहुँ सुख राखै की दुख , दहुँ कस जनम निबाह॥
सरवर तीर पदमिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकलाई॥
ससि-मुख, अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा॥
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि के सरन लीन्ह जनु राहाँ॥
छपि गै दिनहिं भानु कै दसा। लेइ निसि नखत चाँद परगसा ॥
भूलि चकोर दीठि मुख लावा। मेघ घटा महँ चंद देखावा॥
दसन दामिनी कोकिल भाषीं। भौंहें धनुक गगन लै राखीं॥
सरवर रूप विमोहा, हिए हिलोरहिं लेइ।
पाँव छुवै मकु पावौं, एहि मिस लहरहिं देइ॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

पून्यौ तिथि पूर्णिमा की तिथि **पालि** किनारा **ठाढ़ी** खड़ी होना **कुलेली** क्रीड़ा करना **नैहर** मायका **गवनब** गमन करना होगा **काली** कल **जिउ लेहीं** प्राण ले लेंगी **दारुन** निर्दयी **निसरैं** निकलने देना **दहुँ** शायद न जाने **निबाह** निर्वाह **खोंपा** बालों का जूड़ा **मुकुलाई** खोला, मुक्त किया **ओनई** झुक आई **राहाँ राहू छपि गै** छिप गए **नखत** नक्षत्र **परगसा** प्रकट हो गया **दीठि** दृष्टि **विमोहा** विमुग्ध हो गया **मकु** कदाचित्, शायद

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) 'एहि नैहर रहना दिन चारी' कथन किस ओर संकेत करता है ?

(2) सासु-ननद और ससुर के विषय में क्या कहा गया है ?

(3) सरोवर में लहरें उठने का क्या कारण बताया गया है ?

(4) चकोर क्या देखकर भ्रमित हो गया ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) सखियों ने क्या कहकर पद्मावती को सरोवर में स्नान करने के लिए प्रेरित किया ?

(2) पद्मावती के रूप-सौन्दर्य का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए ।

(3) सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

सरवर तीर पदमिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकुलाई ॥
ससि-मुख, अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा ॥
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि के सरन लीन्ह जनु राहाँ ॥

(4) कविता की जिन पंक्तियों में नारी-जीवन की विवशता और परतंत्रता का चित्रण है, उन्हें लिखिए।

योग्यता-विस्तार

- 'पद्मावत' में वर्णित संपूर्ण कथावस्तु को जानिए और उसे संक्षेप में अपने शब्दों में लिखिए ।

•

16	# महाराजपुर से ग्वारीघाट

अमृतलाल बेगड़

(जन्म : सन् 1928 ई.)

अमृतलाल बेगड़ का जन्म जबलपुर में हुआ था। मूलतः चित्रकार वेगडजी ने अपनी कला-शिक्षा शांति निकेतन में प्राप्त की और वहीं लगभग 35 वर्ष तक कला का अध्यापन किया। इनके लिए प्रकृति सबसे प्रिय एवं आत्मीय है। नर्मदा के अनन्य सौंदर्य को आत्मसात् कर उसे अपनी तूलिका एवं लेखनी से साकार कर दिया है। नर्मदा के दोनों किनारों की ढ़ाई हजार किलोमीटर की विकट पदयात्रा द्वारा यह सब संभव हो सका है।

नर्मदा के भव्य सौंदर्य को मूर्त करने वाली अनेक चित्र-प्रदर्शनियाँ देश के बड़े-बड़े शहरों में आयोजित हुईं और कला-मर्मज्ञों द्वारा सराही गई। अपने चित्रों के लिए उन्हें 1994-95 में मध्यप्रदेश शासन के 'शिखर सम्मान' से सम्मानित किया गया। हिन्दी में इनकी तीन और गुजराती में चार पुस्तकें प्रकाशित हैं। बापू, सूरज के दोस्त, भारत मेरा देश, सौंदर्य की देवी नर्मदा, अमृतस्य नर्मदा जैसी कृतियाँ अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत हैं।

'महाराजपुर से ग्वारीघाट' उनकी पुस्तक 'सौंदर्य की देवी नर्मदा' से लिया गया अंश है। इसमें लेखक ने नर्मदा-यात्रा संबंधी अपने अनुभवों का रोमांचक वर्णन किया है। नर्मदा के प्रति लेखक की आस्था-श्रद्धा के साथ ही नर्मदातट-वासियो की लोगों के प्रति आत्मीयता और स्नेहल मानवीयता की भी झलक मिल जाती है। क्या यह वही सहस्त्रधारा है ?

सामने तट से जाते समय इसे दीवाली की छुट्टी में देखा था। सचमुच सहस्त्रधारा थी। नर्मदा की अजस्त्र जलधाराओं का सैलाब उमड़ रहा था। दूर-दूर तक फैले अनगिनत प्रपात नदी के वेग को चौबाला कर रहे थे। हहराती, उफनाती, बलखाती, धारा के पास जाने में बड़ा भय लगा था।

और आज ?

बहुत खोजने पर एक सूक्ष्म धारा मिली। नर्मदा का खूखा चट्टानी पाट गर्म कड़ाह की तरह खौल रहा था। जहाँ हमने भरी-पूरी नर्मदा को देखा था, वहाँ इस गरमी में उसकी साँस भर चल रही थी। सभी कु छ निर्जीव, सुनसान, नेत्रहीन और मूक.....

और हो भी क्या सकता था ? शताब्दी का भयंकर सूखा पड़ा था। कुएँ-तालाब, नदी-नाले प्रायः सूख चले थे। गाँव खाली हो रहे थे। पूरा उत्तर भारत अभूतपूर्व जल संकट का सामना कर रहा था। ऐसे में नर्मदा भी सूखकर कांटा रह जाय, तो क्या आश्चर्य ?

27 मई, 80 को महाराजपुर (मंडला)से चले। पहला दिन था और सुबह से ही धूप चटख हो चली थी, इसलिए अधिक नहीं चले। मानादेही में ही रुक गये। वहाँ से सहस्त्रधारा देखने गए। यह अन्दाज तो था कि धारा सिमट कर रह गयी है लेकिन इस तरह उजड़ गयी होगी, यह कल्पना नहीं थी।

सहस्त्रधारा का वह राजराजेश्वर रूप देखा था--पानी से छलकता, चौकड़ी भरता, घन-घमंड घोषणा करता, और आज यह दलित द्राक्षान्सा रूप देखा-- निर्जला, नीरव, मूक और चट्टानों का ढाँचा मात्र! उतार-चढ़ाव किसके जीवन में नहीं आते ?

पानी के रहने से एक फायदा था--नदी का पाट खुली किताब की तरह सामने था। वेगवती धाराओं ने चट्टानों का कैसा काटा व तराशा था, इसे हम अच्छी तरह देख सकते थे। तारों की शोभा हम तभी देख सकते हैं, जब चाँद न हो। पेड़ के गठन को तभी समझ सकते हैं, जब पतझड़ हो। आज हमें यही मौका मिला था। पानी ने चट्टानों को तराशा तो था ही, आश्चर्य यह देखकर हुआ कि उनमें बड़े-बड़े सुराख कर दिए थे--बिलकुल गोल। फिर उनको नीचे ही नीचे मिला दिया था। हम लोग एक सूराख से उतरे, दूसरे से बाहर निकले। नदी ने मानो पत्थर के कान बींधे थे। यही भँवर होती है। कोई इसमें फँस जाय, तो जिंदा बाहर नहीं निकल सकता। आज समझ में आया कि अच्छे-से-अच्छा तैराक भी अनजान पानी में क्यों नहीं उतरता।

दूसरे दिन पौ फटते ही चल दिए। दोपहर की दहकती गरमी में बुजबुजिया पहुँचे। इस सूखे में भी यह गाँव हरा-भरा था। यहाँ वन-विभाग की नर्सरी है। तरह-तरह के पौधे उगाये जाते हैं---खासकर सागौन के। दूर दूसरी तरह के पौधे थे। मैंने एक मजदूर से पूछा, 'वे काहे के पौधे हैं ?'

'लिपिस्टिक के !'

'लिपिस्टिक के ?' मैंने आश्चर्य से पूछा। उसने फिर वही जवाब दिया तो मैंने पास जाकर देखा। वे यूकिलिप्टिस के पौधे थे!

यहाँ नर्मदा में कुछ अधिक पानी था। प्रपात भी थे। पास ही वन-विभाग के कमरे का बरामदा मिल गया, तो वहीं टिक गये। कमरे में एक कम्पाउंडर रहता था। मंडला से आये उसे पन्द्रह दिन ही हुए थे। बेहद गरमी थी, रात को बाहर सोये। मैं और यादवेन्द्र नीचे जमीन पर, कंपाउंडर चारपाई पर।

रात के कोई डेढ़ बजे बूँदाबाँदी हुई तो मैं बरामदे में आ गया, फिर यादवेन्द्र और अन्त में कम्पाउंडर। हम जमीन पर सोये। कम्पाउंडर चारपाई पर। दरवाजे में पल्ले नहीं थे।

कोई आधा घण्टा हुआ होगा कि कम्पाउंडर जोर से चिल्लाया, 'साँप! साँप! ' हम लोग भी हड़बड़ा कर उठ बैठे। मेरे पास टॉर्च थी, तुरत जलायी। वह कहने लगा, ''साँप था। मेरी बाँह पर था। मुझें ठंडा-ठंडा लगा तो हड़बड़ा उठ कर बैठा।'

वह बुरी करह से डर गया था। अटक-अटक कर बोल रहा था। डर हम भी गये थे। टॉर्च और लालटेन की सहायता से कोने-कोने की तलाशी ली, लेकिन साँप कहीं नहीं था। मैंने कहा, ''तुमहें भ्रम हुआ है ! साँप कहीं नहीं है। फिर तुम तो चारपाई पर लेटे थे, साँप उस पर कैसे चढगा ?

''साँप ही था। मैंने उसे अपनी आँखों से देखा।''

हमें विश्वास नहीं हुआ। लेकिन कोई दस मिनट के बाद देखा, दरवाजे में से साँप आ रहा है।

उसकी बात सच थी। एख लकड़ी की सहायता से मैंने उसे बाहर किया। एक पत्थर पर पानी था, देर तक पीता रहा, प्यासा था। फिर धीर-धीरे आगे बढ़ने लगा।

कम्पाउंडर बोला, 'मारो!' मैंने कहा, 'तुम्हीं मारो।' उसने कहा ''मेरा शरीर तो क्या, आत्मा तक काँप उठी है। मुझसे यह नहीं होगा।''

'यादवेन्द्र, तुम ही मारो!'

"गुरुजी, आज तक साँप नहीं मारा मुझसे भी यह नहीं होगा।"

मैंने कहा,"आप जैसे रथी-महारथी इसे नहीं मार सकते, तो भला मेरी क्या बिसात!"

आगे एक शाल वृक्ष के नीचे जाकर वह रुका, फिर धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगा। थोड़ी देर में काफी ऊपर पहुँच गया। साँप को पेड़ पर चढ़ते पहली बार देखा। कम्पाउंडर की बात पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं रहा।

दूसरी ओर एक दूसरा साँप, जो उससे मोटा था। दूसरे पेड़ पर चढ़ रहा था। हम शायद नागलोक में आ गए थे। रात का घना अँधेरा, सन्नाटे का आलम और पेड़ों पर साँप! बड़ा भय लगा।

इतने में कंपाउंडर एक छोकरे को ले गया। उसी समय पहला साँप पेड़ पर से उतर रहा था। जमीन पर आते ही छोकरे ने दो डंडे जमाये तो साँप का काम तमाम हो गया। दूसरा साँप पेड़ में गायब हो गया, हाथ नहीं आया।

ऐसे में नींद कहाँ से आती। बाकी रात जागकर काटी। कम्पाउंडर कहने लगा, "कल ही मंडला जाकर इस्तीफा दे दूँगा। बीस साल की नौकरी जाय भाड़ में।" हम भी सोच कहे थे, कब सवेरा हो और यहाँ से कूच करें।

सवेरा होते ही चल दिये। हवा एकदम बन्द थई। पूरा भूखंड जल रहा था। पेड़ धूप से कुम्हला गये थे। भरी दोपहर को घाघा पहुँचे। गाँव न जाकर नदी-किनारे एक पेड़ के नीचे रुके। अब जोरों से लू चलने लगी थी। किसी तरह खाना पकाया, खाकर वहीं लेटे। ज्यों-ज्यों पेड़ की छाया सरकती, त्यों-त्यों हम सरकते। आँधी उठती तो सारी देह धूल से अट जाती। पर हवा का हिनहिनाना और पेड़ों का रँभाना सुनने में मन रम गया, तो लू थपेड़े खाते वहाँ पड़े रहे।

शाम तक हमारे ऊपर धूल की चार-छह पर्तें जम गयीं। मैं मानो मोहें-जो-दड़ो होऊँ और यादवेन्द्र हड़प्पा हो, ऐसा हाल हुआ। फर्क यही था कि उन प्राचीन नगरों को दूसरों ने खोद निकाला था, जबकि हम स्वयं उठ खड़े हुए और चलते बने। घाघा में रहने की व्यवस्था हो गयी, तो घूमने निकले। पास ही दूसरा गाँव है--घाघी। वहाँ नर्मदा-तट गये। नदी की धारा उस तट पर थी, इसलिए सूखे रेतीले पाट को पार कर सामने तट पर गये। वहाँ जाकर चकित रह गये। वहाँ कोई धारा ही नहीं थी।

आँखों को विश्वास न हुआ। लेकिन ऐसा पानी नहीं था, तो नहीं था। नर्मदा की धारा टूट गई थी।

पिछले साल भी गरमी में चले थे। लेकिन ऐसा कहीं नहीं देखा था। दाहिनी ओर पतली धारा थी, दूर बायीं ओर भी थी, लेकिन बीच में अचानक गायब हो गई थी। नर्मदा की गागर एकदम खाली थी।

पिछली यात्राओं में हमने नर्मदा का वनवास देखा था, इस बार की यात्रा में उसका अज्ञातवास देखा।

हम चाहते तो दस कदम चलकर उस तट पर पहुँच जाते। लेकिन नहीं गए। नर्मदा ऊपर नहीं है तो क्या हुआ, रेत के नीचे जरूर बह रही है। इकलिए हमने उसे हाजिर-नाजिर माना और वहीं से लौट आये।

अगला पड़ाव बुदेहरा। नर्मदा की धारा यहाँ भी टूट गयी थी।

बुदेहरा से झुरकी। झुरकी के पटेल बड़े विनोदप्रिय थे। हम लोगों का स्वागत करते हुए किसी से कहा, ''आम लोगों के लिए वही प्रागैतिहासिक शरबत ले आओ।''

शरबत आया, बड़ा ही स्वादिष्ट था। कहने लगे, ''यह आँवला, पुदीना आदि से बना है, इसलिए इसे प्रागैतिहासिक शरबत कहता हूँ। ''मैंने देखा, इस विनोदप्रिय आदमी को भी विषाद की काली छाया ने ग्रस लिया था। पास ही बरगी में नर्मदा पर एक विशाल बाँध बन रहा है। उनका यह गाँव और आस-पास के कई गाँव उस बाँध की डूब में आ जायेंगे। तब वे कहाँ जायेंगे, यही चिंता उन्हें सता रही थी। दर असल बेघर होने की यह चिंता इनकी ही नहीं, सारे इलाके की थी।

पद्मघाट में एक अच्छा आश्रम है, रात वहाँ रहे। भोर होते ही चल दिये। पेड़ ऐसे काले दीख रहे थे, मानो झुलसे हुए हों। शाम को बखारी पहुँचे। गाँव के पटेल के यहाँ रहने को तो मिल गया, लेकिन पानी माँगा, तो उसने रस्सी-बालटी थमा दी और कुआँ बता दिया। पानी लेने गए तो रस्सी मुश्किल से बीच कुएँ तक पहुँची ! पानी पाताल को चला गया था। पास की झोपड़ी का ग्रामीण हमारी परेशानी समझ गया। अपनी रस्सी ले आया, दोनों को जोड़ा तब पानी निकला। गाँव के इसी एक कुएँ में पानी था, बाकी सब सूख चुके थे।

यहाँ से छिंदवाहा। नर्मदा के संग-संग चले। रोटो पहुँच कर एक वन-रक्षक की झोंपड़ी में डेरा डाला। वह यहाँ के पेड़ कटवा रहा था। यह इलाका बाँध में डूब जाय, इसके पहले पेड़ों को कटवा लेना जरूरी था।

सुबह नदी में से चले। दिन बेहद गर्म था और हवा ने अपने पंख समेट लिए थे। दोपहर को एक जगह बहुत-से मजदूर स्त्री-पुरुष एक पेड़ के नीचे आराम कर रहे थे। पास ही राहत कार्य में सड़क बन रही थी। इसी में लगे थे। कुछ सो रहे थे, कुछ गा रहे थे। उनका अधेड़-उम्र का मुखिया मौज में आकर नाच रहा था। इनके गीतों ने मन मोह लिया तो गोपीटोला में इन्हीं में से एक के घर रात रह गए। रात को वे और भी गीत सुनायेंगे और नाचेंगे।

यादवेन्द्र भोजन बनाने की तैयारी करने लगा, तो हमारे मजदूर यजमान ने मना कर दिया,--भोजन आपका हमारे यहाँ होगा।

यह आदमी, जिसे हमने चार रुपये रोज पर जेठ की तपती दुपहरिया में हाड़तोड़ मेहनत करते देखा था, कहता है कि भोजन आप हमारे यहाँ करेंगे।

भाई मजदूर ! मैं जरूर तुम्हारी रोटी खाऊँगा। महाभारत के नेवले की तरह इससे शायद मेरा शरीर सोने का हो जाए !

देर रात तक लोकगीत व लोकनृत्य का आनन्द लेते रहे। सुबह बीजासेन के लिए चल दिए। रात को यहाँ भी नृत्य देखने मिले। दिनभर कड़ी मेहनत करने के बाद और रूखा-सूखा खाने के बाद भी ये लोग जीवन का रस लेना जानते हैं।

दूसरे दिन खुश्क पहाड़ियों से होते हुए पायली पहुँचे। पायली में जिनके यहाँ ठहरे थे, वे विधुर थे। मैंने पूछा,''आपने दोबारा शादी क्यों नहीं की ?'' उन्होंने कहा, ''मेरे बच्चे छोटे थे। मैंने सोचा, दोबारा शादी करूँगी तो ये बच्चे माँ से तो गए, बाप से भी जायेंगे। इसलिए नहीं की। अब तो बच्चे बड़े हो गए हैं। बड़े बेटे की बहू भी आ गई है।''

शाम को नर्मदा-तट गए। पच्चीस बरस पहले भी यहाँ आया था। तब यहाँ कैसा घना जंगल था ! विशाल वृक्षों से लिपटी सुदीर्घ लताएँ आज भी याद थीं। पर अब कुछ भी नहीं बचा था। इन्सान की कुल्हाड़ी ने सर्वनाश कर डाला था।